वह जो मेरी गुरु बनी
प्रेमयोगी वज्र द्वारा
2025 में प्रकाशित

© 2025 प्रेमयोगी वज्र। सर्वाधिकार सुरक्षित।
चित्रांकन: डॉ. भीष्म शर्मा

अस्वीकरण

यह पुस्तक आध्यात्मिक कल्पना पर आधारित एक रचना है, जो लेखक के निजी अनुभवों और आंतरिक खोज से प्रेरित है। इसमें प्रयुक्त नाम, पात्र, स्थान और घटनाएँ या तो लेखक की कल्पना की उपज हैं या प्रतीकात्मक रूप से प्रयोग की गई हैं। इस पुस्तक में वर्णित साधनाएँ और विचार किसी भी प्रकार की चिकित्सीय या मानसिक स्वास्थ्य सलाह नहीं माने जाने चाहिए। शारीरिक, भावनात्मक या मानसिक स्वास्थ्य से जुड़े किसी भी विषय के लिए पाठकों को योग्य विशेषज्ञों से परामर्श लेने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है।

विषय सूची

अध्याय 1: शांत पहाड़ियों का लड़का
हिमालय की गोद में पला-बढ़ा एक संकोची बालक ईशान घर छोड़कर दूर के विद्यालय जाता है, जहाँ से उसका एकाकीपन और आत्मखोज की यात्रा शुरू होती है।

अध्याय 2: अनुशासन की गोद में विद्यालय
सेना द्वारा आंशिक रूप से संचालित नए स्कूल में ईशान अनुशासन के साथ-साथ देवदार के वृक्षों से ढके मार्गों में एक गहरा शांत अनुभव करता है।

अध्याय 3: उसका आगमन - मायरा
चंचल और जिज्ञासु सहपाठी मायरा ईशान में रुचि लेती है और उसे विज्ञान प्रश्नोत्तरी के लिए अपना साथी चुनती है।

अध्याय 4: पन्ने और दृष्टिकोण
मायरा ईशान से एक पुस्तक लेती है, जिसमें परिवार नियोजन से जुड़ा विषय है, और यही उनके संबंध में एक सूक्ष्म परिवर्तन की शुरुआत बन जाता है।

अध्याय 5: शब्दों के बिना एक चिंगारी
हालाँकि वे कभी अकेले बात नहीं करते, फिर भी ईशान और मायरा के बीच एक अदृश्य डोर बनती जाती है, जो मौन निकटता को जन्म देती है।

अध्याय 6: सुबह का वह क्षण
एक हल्का-सा खेल का क्षण ईशान के भीतर इच्छा की लहर जगा देता है, जिसे वह योगिक नियंत्रण से आध्यात्मिक ऊर्जा में बदल देता है।

अध्याय 7: बहती ऊर्जा का वर्ष
मायरा की स्मृतियाँ ईशान के भीतर आध्यात्मिक दृश्य और आनंद जगाती हैं, जहाँ प्रेम और अनुशासन मिलकर रहस्यमय तड़प बन जाते हैं।

अध्याय 8: कमंडलु का क्षण और कक्षा का तनाव
एक प्रतीकात्मक वस्तु और बढ़ता तनाव ईशान के भीतर चल रहे संघर्ष और मायरा के प्रति अधूरे भावों को दर्शाते हैं।

अध्याय 9: वह मौन जो बोल उठा
उनके बीच अनकहे भाव तैरते रहते हैं, आँखें बहुत कुछ कह देती हैं, पर शब्द कभी नहीं आते।

अध्याय 10: मौन शोकगीत
ईशान समझने लगता है कि उनके संसार अलग हैं और बिछड़ना तय है, जिससे उसके भीतर एक आध्यात्मिक शोक आरंभ हो जाता है।

अध्याय 11: स्वप्न में बोध
चक्रों के आरोहण का एक स्वप्न मायरा और उसके दादा को एक प्रकाश में विलीन कर देता है, और यहीं पूर्ण कुंडलिनी जागरण होता है।

अध्याय 12: विदाई
परीक्षाओं के बाद मायरा चली जाती है, और ईशान इतना डूबा रहता है कि परीक्षा में असफल होकर वही कक्षा दोहराता है, पर भीतर से वह सदा के लिए बदल चुका होता है।

अध्याय 13: ब्रह्मांडीय विश्वविद्यालय
ईशान का चयन चंद्र विद्या विश्व में होता है, जो चंद्रमा पर स्थित है, और वहीं से उसकी नई ब्रह्मांडीय यात्रा शुरू होती है।

अध्याय 14: सांसारिक विवाह
वह वेदिका से तय विवाह स्वीकार करता है, जिसकी दृढ़ता धीरे-धीरे ईशान को बदलने लगती है।

अध्याय 15: चंद्र नियुक्ति
पशु चिकित्सक बन चुका ईशान अपने परिवार के साथ चंद्र कॉलोनी में रहने लगता है, जहाँ अंतरिक्ष जीवन और मौन चिंतन का नया अध्याय शुरू होता है।

अध्याय 16: पितरों का लोक
चंद्रमा, जो पितरों से जुड़ा है, ईशान को अपने गुरु-दादा की याद दिलाता है और मायरा की छवि धीरे-धीरे कोमल हो जाती है।

अध्याय 17: तंत्र और पुनः जुड़ाव
वेदिका के साथ तांत्रिक साधना उनके संबंधों में नई निकटता लाती है और प्रेम को आध्यात्मिक ऊर्जा से जोड़ देती है।

अध्याय 18: गुरु की वापसी
पृथ्वी की यात्रा के दौरान ईशान में फिर से आध्यात्मिक उभार आता है, जिसे उसके दादा की उपस्थिति और पुराणिक ज्ञान दिशा देता है।

अध्याय 19: स्वप्न, मायरा और रहस्य
मायरा स्वप्नों में दिव्य स्त्री रूप में लौटती है, वही गुप्त गुरु बनकर जिसने ईशान को साधना के मार्ग पर प्रवृत्त किया था।

अध्याय 20: दो प्रेमों के बीच की खाई
ईशान वेदिका से अपना सत्य कह देता है, जिसे वह शांति से स्वीकार करती है, यह दिखाते हुए कि शुद्ध प्रेम हमेशा ऊपर की ओर ले जाता है।

अध्याय 21: पिता, गुरु, स्वयं
ईशान लेखन शुरू करता है और समझता है कि उसकी परंपरा में दिव्य चेतना बहती है, जहाँ विज्ञान और अध्यात्म एक हो जाते हैं।

अध्याय 22: द्वैत से परे जागरण
चंद्रमा पर समाधि की अवस्था में ईशान प्रेम और मार्ग को एक कर देता है और निर्विकल्प–परम शून्य में प्रवेश करता है।

अध्याय 23: वह जो मेरी गुरु बनी
अब एक शिक्षक के रूप में ईशान लिखता है कि कैसे प्रेम ने उसे जागरण तक पहुँचाया और उसका अनुभव सार्वभौमिक मार्गदर्शन बन गया।

परिचय

हिमालय की शांत पहाड़ियों में बसे अपने घर में, धूप से गरम हुई खिड़की के पास, 52 वर्ष के ईशान शर्मा एक कप चाय और पुराने लकड़ी के पुस्तक-स्टैंड के साथ बैठे थे। उनके सामने एक ऐसी कहानी खुली पड़ी थी जो सिर्फ लिखी नहीं गई थी, बल्कि जी गई थी। बाहर की हवा ऐसे सरसराती थी जैसे कोई पन्ने पलट रहा हो, और उसी मौन में उन्होंने फिर से शुरुआत की—उन शब्दों को दोबारा छूते हुए जो कभी उनके भीतर से ऐसे बहे थे जैसे प्राचीन पत्थर से फूटता हुआ झरना।

कुछ पुस्तकें सिखाने के लिए होती हैं, कुछ प्रभावित करने के लिए, लेकिन यह पुस्तक वैसी नहीं है। यह न सिखाने आई है, न चकित करने। *वह जो मेरी गुरु बनी* पूर्णता की कथा नहीं है, बल्कि उस गहरी अपूर्णता की कहानी है जो प्रेम से रूपांतरित हो गई। यह उस साधक की कथा है जो साधना की खोज में नहीं था, उस मनुष्य की जो साधारण जीवन में ठोकर खाकर दिव्य से टकरा गया। यह यात्रा टूटे दिल, भ्रम और ऐसे प्रेम से शुरू होती है जिसे केवल रोमांटिक कह देना बहुत छोटा कर देना होगा।

हिमालय की शांत छाया में जन्मा ईशान एक सामान्य जीवन जीता रहा—कभी शिक्षक, कभी पशु चिकित्सक, पति, पुत्र और मित्र के रूप में। लेकिन इन सब भूमिकाओं के परदे के पीछे कुछ बहुत पुराना जाग रहा था—एक अनकहा बुलावा, एक शाश्वत स्पंदन, जिसे वह न समझ सकता था, न अनदेखा कर सकता था। और तभी वह आई। केवल एक स्त्री के रूप में नहीं, बल्कि एक दर्पण के रूप में, जिसने उसकी दृष्टि बाहर से भीतर मोड़ दी। मायरा। जिसने उसे बल से नहीं, बल्कि केवल अपने होने से ही तोड़ दिया। जिसकी अनुपस्थिति ने भीतर की उपस्थिति को जगा दिया।

इन पन्नों में पाठक को ज्ञान तक पहुँचने का कोई सीधा रास्ता नहीं मिलेगा, क्योंकि आत्मा कभी सीधी रेखा में नहीं चलती। यहाँ विज्ञान और पुराणों के बीच घूमते रास्ते हैं, स्कूल के दोस्तों की हँसी है, प्रेमियों के बीच का मौन है, चंद्रमा की झलकें हैं और भूले हुए जन्मों की गूँज है। और इन सबके बीच एक ऐसा मनुष्य है जो गुरु की तरह नहीं, बल्कि एक ऐसे व्यक्ति की तरह लिखता है जिसे प्रेम ने जगाया—जो आज भी भूलता है, ठोकर खाता है, उठता है और फिर याद करता है।

हर अध्याय एक स्मृति भी है और एक ध्यान भी। ईशान के अनुभवों की मिट्टी में जड़ा हुआ, रहस्यमय बोध के जल से सींचा हुआ और आंतरिक खोज के चंद्रप्रकाश में पनपा हुआ। ये शिक्षाएँ उसकी नहीं हैं; वे जीवन के हृदय से पंखुड़ियों की तरह स्वयं खुलती गईं। उसने तो बस उन्हें इन पन्नों पर उतार दिया, जैसे तब उतारा जाता है जब घाव ही ज्ञान की कोख बन जाए।

यह पुस्तक कोई निर्देश नहीं है, यह एक स्मरण है। कोई उपदेश नहीं, बल्कि भीतर से आती हुई एक हल्की-सी प्रतिध्वनि। एक गीत, एक प्रार्थना, एक सेतु—उन सभी के लिए जिन्होंने कभी आकाश की ओर देखकर फुसफुसाया हो, "क्या इससे भी कुछ अधिक है?"

हाँ, है।
और वह ऊपर नहीं, बाहर नहीं, बल्कि भीतर से शुरू होता है।

वह जो मेरी गुरु बनी में आपका स्वागत है। आशा है कि आप इसमें उत्तर नहीं, बल्कि स्वयं को पाएँगे।

अध्याय 1: शांत पहाड़ियों का लड़का

निचले हिमालय की गोद में, जहाँ बादल पुराने मित्रों की तरह पेड़ों की चोटियों को छूते थे और समय देवदार की सुइयों की सरसराहट के साथ धीरे-धीरे चलता था, वहाँ ईशान नाम का एक लड़का रहता था। उसका गाँव—शांत, बिखरा हुआ और सरल—पत्थरों से अधिक आत्मा में बसा हुआ लगता था। वह ऐसा स्थान था जहाँ सुबह की धुंध लोगों के सपनों को अपने साथ बहा ले जाती थी और शाम की धुंधली रोशनी चूल्हों के पास सुनाई जाने वाली कहानियों में घुल जाती थी।

ईशान उसी मौन की संतान था। दुनिया की नज़रों में वह शांत था—लगभग अदृश्य—स्कूल के गलियारों में ऐसे चलता जैसे गिरती बर्फ। शिक्षक उसकी उपस्थिति दर्ज करते थे, सहपाठी अक्सर अनदेखा कर देते थे। लेकिन उस खामोशी के भीतर एक पूरी तरह जागा हुआ जीवन साँस ले रहा था।

घर में ईशान बदल जाता था। उसकी आँखों में चमक आ जाती, शब्द साफ और जीवंत हो उठते, और उसका मन ऐसी बातें कहता जो दिखाई देने वाली दुनिया से आगे जाती थीं। उसकी माँ अक्सर कहा करती थी कि उसकी चुप्पी खाली नहीं होती, वह बारिश से पहले के आकाश जैसी भरी होती है। अपने भाई-बहनों के लिए वह एक कथाकार था, नकल करने वाला, ऐसा सोचने वाला जो पूछता था कि तारे क्यों काँपते हैं और जागने के बाद सपने कहाँ चले जाते हैं। लेकिन बाहर की दुनिया में शब्द उसका साथ छोड़ देते थे। वे जीभ पर आकर रुक जाते, अनिश्चित, अधूरे, और अक्सर कहे ही नहीं जाते।

उसने अभी-अभी गाँव के छोटे से स्कूल से मैट्रिक की परीक्षा पास की थी—एक मंज़िला इमारत, देवदारों की छाया और अनुशासन से घिरी हुई। उसके अंक शांति से आए और शांति से ही मनाए गए, लेकिन उन्होंने एक नया द्वार खोल दिया। उसके पिता, जो मिट्टी से जुड़े हुए लेकिन संवेदनशील व्यक्ति थे, ने तय किया कि अब ईशान को घर की गोद से बाहर निकलना चाहिए। दो नदियों और एक धूल भरी सड़क के पार एक सीनियर सेकेंडरी स्कूल उसका इंतज़ार कर रहा था—जहाँ बेहतर शिक्षा थी और शायद अनजाने में एक नए तरह का एकांत भी।

जब उसका सामान बाँधा गया—एक लोहे का संदूक, पानी की बोतल, भगवान शिव की एक तस्वीर और घर के कसकर लगाए गए आलिंगन—तभी कुछ भीतर खिसक गया। ईशान केवल जगह नहीं छोड़ रहा था, वह आराम और परिचित लय की भाषा भी पीछे छोड़ रहा था। उसका गाँव सिर्फ एक जगह नहीं था, वह एक ताल था जिसे उसने याद कर रखा था। अब वही ताल स्मृति बनने वाला था।

जाने की सुबह पहाड़ जैसे थम गए थे, मानो सुन रहे हों। माँ की चुप्पी उसके आँसुओं से भारी थी। छोटा भाई उसके कुर्ते से चिपक गया। पिता ने बहुत कुछ नहीं कहा—बस एक दृढ़ सिर हिलाना, पीठ पर एक थपकी और एक नज़र जो सब कह गई। ईशान हिलती बस में बैठ गया और देवदारों को पीछे हटते हुए देखा, जैसे कोई बुज़ुर्ग विदा में हाथ हिला रहे हों।

वह बस यात्रा भीतर की यात्रा का पहला अध्याय थी—जो उसे केवल स्कूल तक नहीं, बल्कि उस स्वयं तक ले जा रही थी जो अभी बन रहा था, अभी छिपा हुआ था। उसे एक अजीब-सी कमी महसूस हुई—लोगों या जगहों की नहीं, बल्कि किसी अनाम चीज़ की, उस शांत निश्चितता की जो पहले उसके भीतर रहती थी। मैदान समतल होते गए, हवा गरम होती गई, और भीतर का मौन और गहरा हो गया।

बढ़ने में एक अलग तरह की तन्हाई होती है। वह अनुपस्थिति की तन्हाई नहीं होती, बल्कि छूटने की होती है। जैसे-जैसे बस पहाड़ों से नीचे उतरती गई, ईशान को लगा कि वह कहीं जा नहीं रहा, बल्कि तोड़ा जा रहा है, ताकि फिर से गढ़ा जा सके।

यही पहाड़ियों की पहली शिक्षा थी—
तुम जोड़कर नहीं बढ़ते, छोड़कर बढ़ते हो।

और यहीं से शांत पहाड़ियों के बाहर उसका जीवन शुरू हुआ। उसे अभी पता नहीं था कि ये रास्ते जल्द ही अजीब मुलाकातों में बदल जाएंगे, कि उसके भीतर की शांति किसी अनजानी उपस्थिति में अपनी प्रतिध्वनि पाएगी—एक ऐसी उपस्थिति जो उसे जगाएगी, मार्ग दिखाएगी और ऐसे बदल देगी जैसे कोई स्कूल कभी नहीं बदल सकता।

लेकिन वह सब बाद की बात है। अभी तो ईशान चुपचाप बैठा था—जड़ों से उखड़ा हुआ एक लड़का, उस दुनिया को देखता हुआ जिसमें वह अभी शामिल नहीं था, इस बात से अनजान कि वह पहले ही एक पथ पर चल पड़ा है—केवल ज्ञान का नहीं, बल्कि अपने भीतर उठने वाली एक मौन क्रांति का।

अध्याय 2: अनुशासन की गोद में एक विद्यालय

हवा में देवदार की गंध तैर रही थी, जैसे किसी पवित्र स्मृति का स्पर्श। जब ईशान आख़िरी हिलती हुई बस से उतरा, जो उसे घर की सुविधा से घुमावदार पहाड़ी रास्तों से यहाँ तक लाई थी, तो एक गहरा मौन उसका स्वागत करने लगा। यह खाली नहीं था, बल्कि भरा हुआ था, जैसे पहाड़ स्वयं साँस रोके खड़े हों। ऊँचे देवदारों के बीच से छनती धूप कंकरीले रास्ते पर ऐसे पड़ रही थी जैसे आकाश से आशीर्वाद बरस रहे हों। उसके शहर में घिसे जूते सूखी पत्तियों और छोटे पत्थरों पर चरमराए, पर वह आवाज़ भी यहाँ आदर से भरी लगी, मानो प्रकृति की भव्य शांति ने उसे धीमा कर दिया हो।

वह कुछ पल रुका। उसकी दृष्टि दो ओक के पेड़ों के बीच बंधी प्रार्थना-पताकाओं पर गई, जो हवा से थकी हुई थीं, फिर भी नाच रही थीं। कहीं पास ही एक पक्षी ने एक बार गाया और उड़ गया, उसकी उड़ान ने मौन को एक फुसफुसाहट की तरह चीर दिया। यह शहर नहीं था, न ही उस चंडीगढ़ के स्कूल जैसा जहाँ वह थोड़े समय के लिए गया था—जहाँ गाड़ियों, मशीनों और आवाज़ों का शोर था, जहाँ पढ़ाई कम और प्रतियोगिता ज़्यादा थी, जहाँ लोग सुनते नहीं थे, बस बोलने की बारी का इंतज़ार करते थे। वहाँ उसका कोमल मन भीतर सिमट गया था।

लेकिन यह जगह अलग थी। शायद इसी कारण पहाड़ उसे फिर बुला लाए थे—शहर की भागदौड़ से दूर। हिमाचल की घनी वनों के बीच यह एक साधारण-सा नागरिक विद्यालय था, जो एक कैंटोनमेंट क्षेत्र में बसा था। यहाँ व्यवस्था थी, पर साथ ही शांति भी। भवनों पर सेना का कोई निशान नहीं था, फिर भी अनुशासन हवा में घुला हुआ था, जैसे वर्षों की साधना का परिणाम हो। हवा तक उद्देश्य के साथ बहती लगती थी।

जब वह स्कूल के फाटक के पास पहुँचा तो दो वरिष्ठ छात्र धीमे स्वर में बात करते मिले। उनकी वर्दी सलीके से थी और देह सीधी। उनमें से एक ने ईशान को देखकर हल्की, सच्ची मुस्कान दी—शहर की बनावटी मुस्कान नहीं, बल्कि मन से निकली हुई। तभी बरामदे से आवाज़ आई, "ईशान शर्मा?" एक लंबे, दुबले शिक्षक नीचे आए, जिनके बालों में चाँदी और आँखों में अनुभव झलक रहा था। उन्होंने हाथ बढ़ाकर कहा, "पाइन क्रेस्ट स्कूल में स्वागत है।" नाम भी ओस की तरह ताज़ा लगा।

जैसे-जैसे वह शिक्षक के साथ भीतर गया, उसने सब कुछ देखा—ध्वज स्तंभ के पास प्रार्थना पताकाएँ, रसोई से आती हल्दी की सुगंध, पुस्तकालय के पीछे से आती झींगुरों की लय। कोई शोर नहीं, कोई जल्दी नहीं। कई हफ्तों बाद पहली बार उसके दिल की धड़कन उसके कदमों के साथ ताल में थी।

इसके बाद के दिन उसकी कल्पना से भी अलग थे। यहाँ शिक्षक आते तो बच्चे आदत से खड़े हो जाते, डर से नहीं। प्रार्थना सभा बोझ नहीं थी, एक आह्वान थी। हर छात्र कुछ कहता—कविता, विचार या प्रार्थना—दिखावे के लिए नहीं, बाँटने के लिए। शिक्षक कठोर थे, पर पहाड़ी मार्गदर्शकों जैसे—नज़र रखते, पर धक्का नहीं देते। कक्षाएँ साधारण थीं, पर ध्यान और एकाग्रता से भरी। ईशान खिड़की की ओर देखते हुए भी सीख रहा होता, जैसे हवा ही पाठ पढ़ा रही हो।

एक दिन अवकाश में गगन नाम का लड़का उसके पास बैठ गया, हाथ में लिंगड़ू का अचार और रोटी। "तुम शहर वाले हो?" उसने मुँह भरे हुए पूछा। ईशान मुस्कराया, "था, अब यहाँ हूँ।" गगन ने ध्यान से देखा और बोला, "तुम यहीं रहोगे, तुम्हारे जैसे लोग हमेशा रुक जाते हैं।" "क्यों?" "क्योंकि तुम कुछ ढूँढते हुए आए हो।" यह वाक्य उसके भीतर देर तक गूँजता रहा।

स्कूल में कोई औपचारिक गुरु नहीं था, पर कक्षाओं के बीच के मौन में, सुबह की धुंध में पीटी करते हुए, या पुराने मंदिर की धूप में बैठकर ईशान को ऐसे बोध मिलते जो शब्दों से परे थे। एक बार नैतिक शिक्षा की कक्षा में शिक्षक ने मेज़ पर एक कंकड़ रखा और कहा, "यह क्या है?" किसी ने पत्थर कहा, किसी ने हथियार। शिक्षक मुस्कराए, "यह नदी से आया है, वर्षों में घिसकर नरम हुआ है। जीवन भी तुम्हें ऐसे ही घिसेगा, बदलेगा। तुम क्या बनोगे, यह तुम्हारा चुनाव है।" ईशान के भीतर कुछ हिल गया। उसने समझा कि परिवर्तन बिजली की तरह नहीं आता, वह चुपचाप आता है।

उस शाम उसने डायरी में लिखा, "मैं समझता था गुरु केसरिया वस्त्र पहनते हैं, मंत्र बोलते हैं, पर शायद देवदार ही मेरे गुरु हैं, शायद वह हवा जो मुझे जगाती है, और शायद मैं स्वयं।"

छात्रावास के पीछे एक पगडंडी थी जो एक पुराने ब्रिटिश बंगले तक जाती थी। कहा जाता था वहाँ कोई साधु रहा था। वहाँ जाना मना था, इसलिए ईशान गया। एक धुंधली सुबह वह अकेला गया। भीतर प्रवेश करते ही एक गहरी शांति छा गई। उसने अपनी साँस सुनी, दिल की धड़कन सुनी और फिर कुछ पल के लिए सब कुछ मिट गया। उसका 'मैं' घुल गया—न नाम, न पहचान, बस एक विस्तृत चेतना। फिर पक्षी बोला और क्षण टूट गया, पर अनुभव रह गया।

इसके बाद स्कूल वही था, पर ईशान बदल चुका था। वह अब लोगों में कहानी देखता था, प्रतियोगिता नहीं। वह डाँट में भी सीखता था। एक दिन गगन ने कहा, "तू बदल गया है।" ईशान बोला, "शायद मैं चीज़ें देखने लगा हूँ।" गगन हँसा, "यही शुरुआत है।"

सर्दियाँ आईं। पहाड़ सफ़ेद चादर ओढ़े साधुओं जैसे लगने लगे। स्कूल गर्म लगने लगा, क्योंकि अब ईशान बाहर से गर्मी नहीं ढूँढ रहा था। उसने सीखा कि अनुशासन नियम नहीं, लय है।

कि आध्यात्मिकता हमेशा माला नहीं पहनती, कभी स्वेटर पहनकर भूगोल भी पढ़ती है। और यह कि पहला गुरु अक्सर तब तक चुप रहता है, जब तक शिष्य सुनने लायक शांत न हो जाए।

अध्याय 3: उसका आगमन - मायरा

देवदार स्थिर खड़े थे, जैसे प्राचीन साक्षी। ठंडी सुबह की हवा में हल्का-सा झुकते हुए वे मानो पहाड़ों के रहस्य फुसफुसा रहे थे। ईशान कंधे पर बस्ता डाले कक्षा की ओर बढ़ रहा था। उसका नया जीवन अब लय में उतरने लगा था—शांत, संतुलित। फिर भी दिल में एक अजीब-सी धड़कन थी, जैसे कुछ बदलने वाला हो।

उस सुबह वह जल्दी पहुँच गया था और खिड़की के पास अपनी जगह पर बैठा पहाड़ियों को देख रहा था, जो उसे अपने गाँव की याद दिला रही थीं। उसने गहरी साँस ली और तभी—बिना किसी शोर, बिना किसी घोषणा के—वह भीतर आई। मायरा। उसकी चाल साधारण थी, आँखों में जिज्ञासा, बालों में ढीली चोटी, और चेहरे पर सहज मुस्कान। उसकी दृष्टि घूमती हुई सीधे ईशान पर आकर रुकी। ईशान ने आँखें झुका लीं, पर वह क्षण वहीं ठहर गया, जैसे पत्ते पर ठहरी ओस।

उस दिन वे नहीं बोले। अगले दिन वह पीछे की बेंच पर बैठी, कभी गुनगुनाती, कभी नोटबुक में चित्र बनाती। उसकी उपस्थिति सपने जैसी थी, जो जागने के बाद भी मन में रह जाती है। फिर एक दिन क्विज़ प्रतियोगिता की घोषणा हुई—विषय था बाल देखभाल और परिवार नियोजन। कक्षा छूटते समय मायरा ईशान के पास आई, "क्या तुम्हारे पास पढ़ने की कोई अच्छी किताब है?" ईशान ने सिर हिलाया, "हाँ, मेरे चाचा की एक किताब है, मेडिकल है, मैं कल लाऊँगा।" अगले दिन उसने किताब अख़बार में लपेटकर दी। उँगलियाँ छू गईं और कुछ अनकहा बह गया।

किताब लौटाते समय मायरा की आँखों में हल्की झिझक और खुशी थी। उसने धीरे कहा, "बहुत काम की थी... और तुम्हारा खुलापन भी अच्छा लगा।" ईशान कुछ नहीं बोला, पर दिल तेज़ हो गया। उस दिन के बाद उनके बीच एक मौन रिश्ता गहराने लगा। वे अकेले नहीं बोले, पर नज़रों, मुस्कानों और नाम के उच्चारण में कुछ जाग चुका था।

क्विज़ के दिन बादल छाए थे। बाहर खड़े मायरा ने पूछा, "घबराहट है?" ईशान बोला, "नहीं, तुम्हारे साथ शांत हूँ।" वह हँसी, "अच्छा है, मैं घबरा रही हूँ।" वे संतुलन थे। प्रतियोगिता में उसका ज्ञान और मायरा का आत्मविश्वास मिल गया। लोग कहने लगे कि मायरा की आवाज़ ईशान को भीतर से हिला देती है।

उस दिन के बाद दोनों के बीच कुछ जड़ पकड़ चुका था। न कोई स्वीकार, न पीछा—बस एक मौन धारा। पहाड़ जानते थे, देवदार जानते थे, और शायद उनकी आत्माएँ भी। मायरा अनजाने में उसकी दर्पण, प्रेरणा और एक पवित्र चिंगारी बन चुकी थी। ईशान, जो पहले केवल पहाड़ों से

बात करता था, अब अपने हृदय से बात करने लगा था। उसे नहीं पता था कि यह केवल शुरुआत है, कि यही उपस्थिति उसे जगाने वाली है।

वह उसकी गुरु बनेगी।
और यह यात्रा यहीं से शुरू हो रही थी।

अध्याय 4: पन्ने और दृष्टि

उस सुबह पहाड़ियों पर धुंध नीचे तक उतर आई थी, जैसे ढलानों पर कोई मुलायम शॉल डाल दी गई हो। ईशान देवदार के नीचे बैठा था, उँगलियों से गीली मिट्टी पर अनजाने आकार बनाता हुआ, और उसका मन मायरा के विचारों से भरा हुआ था। क्विज़ के बाद कुछ बदल गया था। उनकी शांत मित्रता में अब एक हल्का-सा कंपन था, जिसे वे दोनों पूरी तरह समझ नहीं पा रहे थे, लेकिन भीतर तक महसूस कर रहे थे। यह किसी बड़े इशारे या कहे गए वादों में नहीं था। यह उस तरह था जैसे उसका नाम बिना बोले ही उसके होंठों पर टिक जाता, या गलियारे के उस पार उसे देखते ही दिल थोड़ा तेज़ धड़कने लगता। मायरा उसके जीवन में किसी तूफ़ान की तरह नहीं आई थी, बल्कि दीपक की रोशनी में पढ़ी गई कविता की तरह आई थी, जिसकी हर पंक्ति पहले से अधिक अर्थ खोलती जाती है।

उसे वह दिन साफ़ याद था जब वह पहली बार उससे मदद माँगने आई थी। वह केवल किताब माँगना नहीं था, बल्कि उसका तरीका था। सीधा, लेकिन एक जिज्ञासा के साथ जो सतह से गहराई तक पहुँचती लगती थी। क्विज़ का विषय भी कई लोगों को असहज कर देने वाला था—बाल देखभाल और परिवार नियोजन—एक ऐसा विषय जो समाज में झिझक और चुप्पी से भरा रहता है। लेकिन मायरा ने किताब माँगते समय न हँसी, न शर्माई। ईशान को यही बात सबसे अधिक अच्छी लगी थी।

जिसे उसने उस समय किसी से नहीं कहा, यहाँ तक कि खुद से भी नहीं, वह यह था कि किताब देने से पहले वह कितनी देर तक हिचकिचाया था। वह कोई पाठ्यपुस्तक नहीं थी, बल्कि उसके चाचा की निजी मेडिकल किताब थी—सीधी, तथ्यपूर्ण, बिना किसी संकोच के। उसमें शरीर, प्रजनन और गर्भनिरोध जैसे शब्द थे, जिन पर उसके सहपाठी अब भी असहज हो जाते थे। लेकिन मायरा ने माँगा था, और वह उसे मना नहीं कर पाया।

अगले दिन जब उसने वह किताब अख़बार में लपेटकर उसे दी, तो उसने देखा कि मायरा की आँखें उसके चेहरे पर कुछ ढूँढ रही थीं—अनुमति नहीं, आकर्षण नहीं, शायद समझ। उसने कुछ नहीं कहा, बस सिर हिलाया और बोला, “सीधी है, लेकिन काम की है।” उसने किताब ली, उसकी उँगलियाँ उसकी उँगलियों से छू गईं, और वह स्पर्श छोटा होते हुए भी भीतर तक हिलाने वाला था। अगले दो दिन ईशान ने जानबूझकर इस बारे में ज़्यादा नहीं सोचा, जब तक कि उसने किताब लौटा नहीं दी।

उसके चलने में हल्की झिझक थी, किताब को दोनों हाथों से ऐसे पकड़ा हुआ था जैसे वह कुछ पवित्र और नाज़ुक हो। चेहरे पर हल्की लज्जा थी, पर मुस्कान उससे भी अधिक उजली। उसने धीरे से कहा, “बहुत काम की थी... धन्यवाद, और इतने खुलेपन के लिए भी।” वह केवल धन्यवाद नहीं था, बल्कि उसके पीछे की सच्चाई थी जिसने ईशान को छू लिया। उस छोटे से

संवाद ने विषय से जुड़ी सारी झिझक को तोड़ दिया था। मायरा ने न मज़ाक किया, न हँसी। उसने किताब सम्मान के साथ लौटाई, और साथ में कुछ अनकहा भी छोड़ गई। उस दिन के बाद उनके बीच की हवा बोलने लगी, बिना शब्दों के।

क्विज़ का दिन भी बेचैनी से भरा था, और इस बार उन्हें साथ लाने वाला न संयोग था न शिक्षक—मायरा ने खुद ईशान को चुना था। कक्षाओं के बीच पेड़ के नीचे उसने कहा था, "मैं तुम्हें अपने साथ चाहती हूँ।" शब्द साधारण थे, पर आँखों में सच्चाई थी। मेडिकल समूह में पाँच लड़कियाँ और दो लड़के थे, इसलिए किसी प्रतियोगिता का सवाल ही नहीं था। फिर भी उसकी कुछ सहेलियाँ उनके बीच बढ़ती नज़दीकी से असहज थीं। कुछ ने धीरे-धीरे दूरी बनाने की कोशिश की, मुस्कान और अपनापन दिखाकर भीतर से जलन छिपाई। ईर्ष्या अक्सर प्रेम का ही मुखौटा पहन लेती है।

ईशान ने सब महसूस किया, लेकिन वह जानता था कि मायरा उसे केवल पढ़ाई के लिए नहीं चुन रही है। उसके भीतर कुछ और गहरा था, कुछ सहज और आत्मिक। और वही उसके लिए काफ़ी था। उसका शांत स्वभाव और स्पष्ट ज्ञान मायरा की वाणी और आत्मविश्वास के साथ मिलकर एक अनोखा संतुलन बना रहे थे। जब मायरा ने बाल विकास पर बोलते हुए माता-पिता के स्नेह की महत्ता बताई, तो पूरा कक्ष मौन हो गया। वह उत्तर नहीं बोल रही थी, वह सत्य बोल रही थी।

बाद में एक सहपाठी ने हँसते हुए कहा, "तू तो रोने वाला लग रहा था जब वह बोल रही थी, ठीक है न?" ईशान हँस दिया, लेकिन भीतर कुछ हिल गया था। वह केवल प्रशंसा नहीं थी, वह श्रद्धा थी।

अब देवदार के नीचे बैठे हुए वह सब उसके मन में दोबारा चल रहा था। क्विज़ समाप्त हो चुका था, उनके नाम विजेताओं में घोषित हो चुके थे, लेकिन असली बात कुछ और थी। उस प्रतियोगिता ने उनके रिश्ते की किताब में एक नया पन्ना खोल दिया था। वे अब भी अकेले नहीं बोले थे, बातचीत समूह में ही होती थी, सुरक्षित और अनकही। फिर भी हर नज़र, हर हल्की मुस्कान किसी पुराने श्लोक की तरह लगती थी, जिसे केवल वे दोनों पढ़ सकते थे।

कभी-कभी ईशान उसे उसे देखते हुए पकड़ लेता, जब वह सोचती थी कि वह देख नहीं रहा। और कभी कक्षा के बीच उनकी आँखें मिल जातीं और कुछ बहुत पुराना जाग उठता—उनके जीवन से भी पुराना, किशोर प्रेम से भी गहरा। एक दिन दोस्तों के बीच बैठकर मायरा ने हँसते हुए कहा, "ईशान ने मुझे सबसे अजीब किताब दी।" ईशान ने पूछा, "अजीब?" वह बोली, "अजीब तरह से सच्ची।" किसी ने कहा, "लड़की को ऐसी किताब देना हिम्मत की बात है।" ईशान ने कंधे उचका दिए, "उसने माँगी थी।" मायरा मुस्कराई, "और मैं उसकी इज़्ज़त करती हूँ कि उसने ज्ञान को मीठा बनाकर नहीं दिया। सच को चुप्पी में नहीं छुपाना चाहिए।"

वह क्षण ईशान के भीतर अंकित हो गया। उसने उसमें एक खोजी की निडरता देखी, जो आराम से ज़्यादा सच को चुनती है, जो पवित्र बातों पर हँसती नहीं, बल्कि उन्हें संभालती है। उस रात वह अपने पलंग पर लेटा छत को देखता रहा। खिड़की से देवदार की पत्तियाँ टकराती थीं, जैसे किसी बुद्धिमान संसार की फुसफुसाहट हो। उसने मायरा के बारे में सोचा–एक लड़की के रूप में नहीं, बल्कि एक दर्पण के रूप में। वह उसके संसार में आई नहीं थी, उसने उसे खोल दिया था।

उसे दादा की कही बात याद आई: "जब आत्मा की पुकार रूप लेती है, तो वह देवी बनकर नहीं, दोस्त बनकर भी आ सकती है, अजनबी बनकर भी, या सहपाठी बनकर भी। पर तुम उसे पहचानोगे–उसके शब्दों से नहीं, उस मौन से जो वह तुम्हारे भीतर जगाती है।" यही मायरा थी। केवल जिज्ञासु आँखों वाली लड़की नहीं, बल्कि उसकी गहरी तड़प की प्रतिछवि–सीखने की, बढ़ने की, जागने की। शायद इसलिए परिवार नियोजन जैसा विषय उनके बीच असहज नहीं लगा, बल्कि स्वाभाविक लगा, क्योंकि वे प्रेम के नहीं, सत्य के खोजी थे।

और ईशान को अब यह साफ़ दिखने लगा था–मायरा संयोग नहीं थी। वह केवल सहपाठी नहीं थी। वह उसकी चिंगारी थी। वह उसकी गुरु बनेगी। यात्रा अभी शुरू ही हुई थी, लेकिन समझ के पहले पन्ने पलट चुके थे–पुराने ग्रंथों की तरह, जो आँखों के सामने होते हुए भी पढ़े जाने की प्रतीक्षा करते हैं।

नींद में जाते हुए उसने हवा से फुसफुसाकर कहा, "वह जो मेरी गुरु बनेगी... उसे अभी पता भी नहीं है।" देवदार धीरे से हिले। शायद उन्हें पता था।

अध्याय 5: बिना शब्दों की एक चिंगारी

स्कूल की आख़िरी घंटी बज चुकी थी और जैसे पिंजरे से छूटे पक्षी, छात्र गलियारों में फैल गए थे। हँसी, बातें और धूल भरी फर्श पर चलते पैरों की आवाज़ से हवा भर गई थी। लेकिन ईशान शर्मा ने कभी की तरह जल्दी नहीं की। वह बरामदे के कोने में, बरसों की धूप और बारिश से घिसे खंभे के पीछे आधा छिपा खड़ा था, उसी शांत जिज्ञासा के साथ दुनिया को देखता हुआ—एक ऐसी शांति जो अब ध्यान खींचने लगी थी, खासकर मायरा का।

उसकी सहेलियाँ हमेशा की तरह खिलखिला रही थीं, अनजली तो हाथ हिलाते हुए किसी बात को बड़े जोश से सुना रही थी, लेकिन आज मायरा कुछ अलग थी। उसकी नज़र बस एक पल के लिए, वसंत की हवा की तरह हल्की, ईशान की ओर गई—सिर थोड़ा झुका हुआ, आँखों में विचारों का बोझ। वे कभी अकेले नहीं बोले थे, कभी साथ नहीं चले थे, एक बार भी नहीं, न संयोग से। और वे कभी करेंगे भी नहीं—न यहाँ, न इस समय, न इस जगह।

उनके छोटे से कस्बे में वह दौर ही ऐसा था जहाँ लड़का और लड़की का साथ चलना भी फुसफुसाहटों और उठी हुई भौंहों का कारण बन जाता था। एक छोटा-सा स्पर्श भी तूफ़ान खड़ा कर सकता था। पहनावा सादा और पारंपरिक था, बालों की शैली भी मर्यादित। पढ़ाई आधुनिक विज्ञान की थी, लेकिन जीवन की धड़कन परंपरा और मर्यादा से बंधी थी। मायरा इस सीमा को नदी की तरह स्वाभाविकता से मानती थी—डर से नहीं, बल्कि सम्मान से। और ईशान तो उन रेखाओं को लाँघने की कल्पना भी नहीं कर सकता था। वह वैसे भी कम बोलता था। जब बोलता भी, तो बस पूछा जाने पर।

एक दिन, कक्षा में अध्यापक के आने से पहले, अनजली ने ज़ोर से मज़ाक किया, "देखो ईशान को! मायरा, लगता है अभी शिव की तीसरी आँख खोल देगा!" सब हँस पड़े। मायरा भी हँसी, लेकिन उसकी आँखों में चमक थी जो उस हँसी से मेल नहीं खाती थी। उसने मुस्कराकर कहा, "ईशान शर्मा, बताओ—ध्यान कर रहे हो या दुनिया का उद्धार?" ईशान ने चौंककर ऊपर देखा, फिर हमेशा की तरह नज़र झुका ली। उसके चेहरे पर हल्की लालिमा आ गई। उसने कुछ नहीं कहा। उसकी चुप्पी ही उसका उत्तर थी, और वही चुप्पी मज़ाकों को भी शांत कर देती थी।

स्कूल से जुड़ा एक छोटा छात्रावास था, जहाँ ज़्यादातर लड़के रहते थे—शोर, शरारतें, आधी रात की फुसफुसाहटें और किशोर जीवन की सारी हलचल। लेकिन ईशान शायद ही कभी वहाँ रुकता था। हर दिन आख़िरी कक्षा के बाद वह कई किलोमीटर पैदल चलता, फिर एक खड़खड़ाती बस पकड़ता और फिर पैदल चलता हुआ घर पहुँचता। कोई नहीं समझता था कि वह यह सब क्यों करता है। लेकिन ईशान जानता था कि घर में कुछ ऐसा इंतज़ार करता है जो छात्रावास में नहीं मिल सकता।

शाम ढलते ही जब छायाएँ लंबी होने लगतीं, वह अपने सादे घर पहुँचता—जहाँ मिट्टी, धूप और पुराने ज्ञान की खुशबू थी। भीतर खिड़की के पास उसके दादा पालथी मारकर पुराणों का पाठ करते—कभी श्रीमद्भागवत, कभी शिवपुराण, कभी देवीभागवत। शब्द हवा में जुगनुओं की तरह तैरते। उसकी परदादी पास ही खाट पर बैठी हरि नाम जपती रहतीं। वे कथाएँ ईशान के लिए कल्पना नहीं थीं, वे दर्पण थीं, जिनमें वह खुद को देखने लगा था।

ऐसी ही एक शाम, जब दादा राधा के प्रेम की कथा कह रहे थे, ईशान के मन में मायरा आ गई। क्या ऐसा प्रेम आज भी संभव है—जो प्रतीक्षा करता है, जो देखता है, जो कुछ माँगता नहीं, कहता नहीं, बस होता है? उसने कभी उसके साथ चलकर बात नहीं की थी, कभी हाथ नहीं छुआ था, फिर भी वह उसकी साँसों में रहने लगी थी—न आसक्ति बनकर, बल्कि एक पवित्र उपस्थिति की तरह, जैसे वह बांसुरी जिसे केवल राधा सुन सकती है।

एक दिन समूह कार्य के दौरान मायरा ने अचानक कहा, "तुम ऐसे सुनते हो जैसे केवल सुन नहीं रहे, बल्कि मुझे याद कर रहे हो।" उसकी आवाज़ में मज़ाक भी था और कुछ कोमलता भी। ईशान ने बिना सोचे कहा, "शायद मैं सच में कर रहा हूँ।" सब हँस पड़े। मायरा कुछ पल चुप रही। मुस्कान थोड़ी फीकी हुई, पर कुछ और गहरा आ गया। हवा बदल गई थी। जैसे कोई तार छेड़ दिया गया हो।

कुछ दिन बाद स्कूल ने पास के एक प्राचीन शिव मंदिर की शैक्षणिक यात्रा घोषित की। मंदिर के पीछे बरगद के नीचे ईशान बैठ गया। हवा चली, घंटी बजी और गर्भगृह से "ॐ नमः शिवाय" की ध्वनि बाहर आई। उसने आँखें बंद कर लीं—ध्यान के लिए नहीं, बस होने के लिए। कुछ देर बाद हल्के कदमों की आहट हुई। मायरा थी। वह पास बैठी नहीं, बस खड़ी रही। उसने कहा, "तुम अलग लगते हो, जैसे इस युग के नहीं हो।" ईशान मुस्कराया, "शायद मैं ज़्यादा कहानियाँ पढ़ता हूँ।" वह बोली, "या शायद ज़्यादा याद करता हूँ।" फिर उसने धीरे पूछा, "प्रेम क्या होता है?" ईशान ने कहा, "शायद वह जो तब बचा रह जाए जब सारी इच्छा सो जाए।"

वापसी की बस में कोई नहीं बोला। ईशान खिड़की से बाहर देखता रहा। मायरा आगे बैठी थी। शीशे में उनके प्रतिबिंब कुछ पल को मिले—न शब्द, न स्पर्श, बस एक चिंगारी।

उस रात, जब दादा वही पंक्ति दोहरा रहे थे—"राधा का प्रेम अधिकार नहीं, केवल उपस्थिति जानता था"—ईशान ने आँखें बंद कर लीं और उस कथा में बह गया। यह कल्पना नहीं थी। यह बहुत, बहुत वास्तविक था।

अध्याय 6: भोर का वह साक्षात्कार

अगली सुबह की घंटी अभी बजी नहीं थी, लेकिन ईशान शर्मा पहले ही पाइन क्रेस्ट स्कूल के शांत गलियारे में खड़ा था। सूरज पूरी तरह उगा नहीं था, पर आकाश के किनारों पर सुनहरी आभा फैल चुकी थी, जिससे पुरानी औपनिवेशिक इमारत किसी स्वप्न जैसी लग रही थी। देवदार के पत्तों की सरसराहट और दूर कहीं जागते पक्षियों की हल्की चहचहाहट सुनाई दे रही थी।

उसके कदम केवल आदत से नहीं, बल्कि भीतर खिंचती किसी अदृश्य डोर से चल रहे थे। कल की घटनाएँ—मायरा की अनकही दृष्टि, छाती में उठी गर्मी, लगभग छू लिया गया वह क्षण, और वह मौन जो शब्दों से भी अधिक बोल रहा था—अब भी भीतर राख के नीचे दबी अंगारों की तरह सुलग रही थीं। उसे नहीं पता था कि आज क्या होने वाला है, लेकिन वह जानता था कि यह साधारण दिन नहीं होगा।

कक्षा का दरवाज़ा हल्की-सी चरमराहट के साथ खुला। भीतर का दृश्य देखकर वह ठिठक गया। मायरा पहले से वहाँ थी—खिड़की के पास लंबी लकड़ी की मेज़ पर खेल-खेल में लेटी हुई, ठीक वहीं जहाँ वह आमतौर पर बैठता था। उसकी आँखों में शरारत चमक रही थी, और खुले बालों पर सुबह की रोशनी ऐसे गिर रही थी जैसे कोई उजला जलप्रपात।

“मैं पहले पहुँच गई,” उसने फुसफुसाकर कहा, जैसे कोई बच्ची खाने से पहले मिठाई चुरा ले।

ईशान ने हल्की मुस्कान के साथ भौंह उठाई। “क्या तुम हर सुबह मेज़ पर लेटती हो, या आज कुछ खास है?”

वह हँसी, हल्की और साफ। “शायद आज दिन शुरू होने से पहले कला बनना चाहती थी।”

उसकी हँसी कमरे में गूँज गई। “तुम्हारी कला की परिभाषा थोड़ी अजीब है।”

“लेकिन सुंदर है न?” उसने अंगड़ाई लेते हुए पूछा। अब उसका सिर उसके हाथ से बस कुछ इंच दूर था।

वह नज़दीकी। वह मासूमियत। और फिर भी उनके बीच कोई चंचल, चुभती हुई अनुभूति नाच रही थी। ईशान ने उसे ऐसे महसूस किया जैसे भीतर कहीं बहुत गहराई से कोई धारा उठी हो—जीवन जितनी पुरानी, उतनी ही सच्ची।

ऊर्जा की एक तेज़ लहर उठी—पहले रीढ़ के मूल में कुंडली मारकर, फिर धुएँ की तरह ऊपर चढ़ती हुई। एक क्षण के लिए आदिम और पवित्र एक हो गए। आकर्षण और जागरूकता के बीच की रेखा काँप उठी, जैसे तनी हुई रस्सी।

उसकी साँस धीमी हो गई। मन उस क्षण के नशे में डूबना चाहता था, लेकिन उससे भी गहरे कुछ जाग उठा।
याद रखो, इच्छा तुम्हारी शत्रु नहीं है, वह तुम्हारा द्वार है—दादा की आवाज़ भीतर गूँज गई, जैसे कोई पुराना राग मौन में फिर से बज उठा हो।

ईशान ने उस अनुभूति को दबाया नहीं। वह जानता था कि दबाना केवल उसे भीतर गाड़ देना है, जो बाद में फूटेगा। उसने भीतर की ओर मुड़कर उस लहर पर सवारी की—जैसे नदी समुद्र में मिलती है। एक ही क्षण में वह ऊर्जा ऊपर की ओर बह गई, वही रीढ़ अब मार्ग बन गई थी, और चेतना जैसे खुले आकाश में उठ गई।

उसकी आँखें आधी बंद हो गईं—भागने के लिए नहीं, उपस्थित होने के लिए।
आज्ञा... सहस्रार... मौन।

उसे लगा जैसे उसका पूरा अस्तित्व एक दीपक बन गया हो—स्थिर, जाग्रत, शांत। कक्षा, मेज़, मायरा—सब थे, और फिर भी नहीं थे। वह दृश्य में था भी और उससे परे भी, जैसे कोई साक्षी जो देख भी रहा है और अछूता भी है।

मायरा ने वह परिवर्तन देख लिया। उसकी शरारती मुस्कान गायब हो गई। वह धीरे से बैठ गई, आँखें झपकाती हुई। "यह... अभी क्या हुआ?" उसने फुसफुसाकर पूछा।

ईशान ने आँखें खोलीं, अब पहले से कहीं अधिक शांत। "कुछ भी नहीं... और सब कुछ।"

वह थोड़ा पास झुकी। उसकी आँखों में जिज्ञासा और श्रद्धा एक साथ थीं। "तुम बदल गए। मैंने देखा। महसूस किया। जैसे तुम यहाँ थे... और नहीं भी।"

ईशान मुस्कराया। "कभी-कभी इच्छा की आग ही रास्ता दिखाती है, अगर हम उसे दौड़ने न दें, सिर्फ देखें।"

उसने भौंहें सिकोड़ लीं। "लेकिन... तुम्हें आकर्षण नहीं हुआ?"

"हुआ," उसने सच कहा। "लेकिन वह ऊर्जा हमेशा उसी दिशा में नहीं जाती जहाँ दुनिया चाहती है। वह कुछ और बन सकती है।"

मायरा चुप रह गई, जैसे भीतर कुछ टूटकर खुल गया हो। "यह... बहुत सुंदर है।"

तभी बाहर किसी के कदमों की आहट आई। शायद कोई शिक्षक। जादू टूटने वाला था। मायरा झट से मेज़ से उतर गई। "अगर किसी ने हमें ऐसे देख लिया तो..."

ईशान हँस पड़ा। "तो इसे भी कला कह देंगे।"

उसने उसे हल्का-सा धक्का दिया, फिर रुककर बोली, "ईशान... मुझे लगता है तुम यहाँ सिर्फ छात्र नहीं हो। तुम कुछ और हो।"

"तुम भी नहीं हो," उसने धीरे से कहा, उसकी आँखों में देखते हुए।

एक क्षण के लिए दोनों के बीच कुछ बहुत पुराना गुज़र गया—कोई पहचान, कोई स्मृति, जैसे यह दृश्य वे पहले भी जी चुके हों, किसी और आकाश के नीचे, किसी और शरीर में।

तभी दरवाज़ा खुला।
मिस्टर दत्त थे।
"आज तो जल्दी आ गए," उन्होंने मुस्कराकर कहा।

"होमवर्क देख रहे थे," मायरा ने जल्दी से कहा।
मिस्टर दत्त ने एक पल उन्हें देखा, जैसे भीतर कुछ समझ गए हों, फिर कुछ कहे बिना मेज़ की ओर बढ़ गए।

पूरी सुबह कक्षाएँ अजीब-सी गंभीर शांति में बीतीं। ईशान ने देखा कि मायरा उसे बार-बार देख रही है—छेड़ने के लिए नहीं, बल्कि जैसे उसने कुछ पवित्र देख लिया हो।

दोपहर के भोजन में गगन ने उसे छेड़ा, "तुम दोनों के बीच क्या चल रहा है? पूरा योगी-वाइब आ रहा है।"
ईशान मुस्कराया। "कुछ नहीं हुआ... और सब कुछ बदल गया।"
गगन सिर हिलाता रह गया।

शाम को ईशान स्कूल के पीछे के बगीचों में अकेला टहल रहा था। जब भी भीतर कुछ हिलता था, वह यहीं आता था। आज हवा अर्थ से भरी थी। हर पत्ता, हर छाया जैसे कुछ कह रही थी। उसे दादा की बात याद आई—कुंडलिनी, ऊर्जा, जीवन से भागना नहीं, बल्कि उसे साफ़ देखना।
इच्छा तीली है, जागरूकता लौ है, और प्रेम वह प्रकाश है जो दोनों के मिट जाने पर भी बचा रहता है।

पीछे से हल्की आहट हुई।
मायरा थी।
“मुझे पता था तुम यहीं मिलोगे,” उसने कहा।
“कैसे?”
“पता नहीं... बस महसूस हुआ।”

वे देवदार के नीचे बेंच पर बैठ गए। काफी देर बाद उसने पूछा, “क्या मैं भी... कभी वह कर पाऊँगी जो तुमने सुबह किया?”
“मैंने किया क्या?”
“तुमने कुछ अस्त-व्यस्त और गरम चीज़ को शांत और पवित्र बना दिया।”
ईशान ने कहा, “तुम पहले से कर सकती हो। बस देखो... और भागो मत।”

वह कुछ देर चुप रही। “कभी-कभी लगता है मैं कुछ जानती थी... और फिर भूल गई।”
“अब याद आ रहा है,” उसने कहा।

हवा हल्की चली।
“ईशान...”
“हाँ?”
“तुम असल में हो कौन?”
उसने बिना गर्व, बिना अभिनय कहा, “एक छात्र, एक साधक, एक लड़का जिसे कोई ऐसा मिला जिसने उसे उसका रास्ता याद दिला दिया।”
“और मैं?”
उसने मुस्कराकर कहा, “वह जो मेरी गुरु बनी।”

वे चुप बैठे रहे। कोई घोषणा नहीं, कोई नाटक नहीं। केवल उपस्थिति की पवित्रता।

अध्याय 7: बहती ऊर्जा का वर्ष

पाइन क्रेस्ट स्कूल के ओस से भीगे आँगन में भोर की हल्की हवा बह रही थी और मौन को धीरे-धीरे हिला रही थी। उस सुबह जो हुआ था—जब मायरा शरारत से मेज़ पर लेटी थी और ईशान ने कच्ची इच्छा को शुद्ध उपस्थिति में बदल दिया था—वह घंटी के साथ समाप्त नहीं हुआ। वह एक मौन क्रांति की शुरुआत थी। वह सुबह केवल बीती नहीं थी, उसने भीतर एक द्वार खोल दिया था।

आने वाले हफ्तों में ईशान ने अपने भीतर एक अजीब बदलाव महसूस किया। मायरा की हर झलक, उसका अनजाने में अनजली के कान में कुछ कहना, किसी साधारण-सी बात पर हँस पड़ना—सब उसकी रीढ़ में ऊर्जा की लहरें जगा देते थे। यह अब पुरानी इच्छा नहीं थी, न बेचैन, न जलाने वाली। यह बह रही थी, जैसे कोई संगीत। उसने अपनी डायरी में इस समय को "बहती ऊर्जा का वर्ष" नाम दिया।

एक दिन दोपहर के भोजन के समय गुलमोहर के पेड़ के नीचे बैठे हुए गगन ने हँसकर कहा, "तू ऐसा लग रहा है जैसे भूत देख लिया हो।" ईशान ने सपनीली आँखों से कहा, "भूत नहीं, देवी।" गगन ने आँखें घुमाईं, "फिर वही मायरा?" ईशान मुस्कराया, पर कुछ बोला नहीं। गगन बोला, "एक दिन तू उसे देखेगा और हनुमान की तरह उड़ जाएगा।" ईशान ने धीरे कहा, "शायद यही प्रेम है—जो आदमी को हल्का बना देता है।" गगन कुछ पल गंभीर हो गया, "तू अब स्कूल के लड़के जैसा नहीं बोलता, कबीर जैसा बोलने लगा है।" ईशान हँस पड़ा।

फिर उसने गगन से कहा, "कभी-कभी जब मैं उसे देखता हूँ, तो एक पल के लिए मुझे दादा गुरु का चेहरा दिख जाता है। जैसे मायरा और वे मेरे भीतर प्रतीक बनकर एक हो गए हों—एक प्रेम का, दूसरा अनुशासन का। दोनों मुझे उसी शांति तक ले जाते हैं।" गगन ने सीटी बजाई, "ये तो बहुत ऊपर की बात है।"

वह साल ईशान के लिए पहले कभी जैसा नहीं था। मानो पूरा ब्रह्मांड उसकी नई जागरूकता की परीक्षा ले रहा हो। एक दिन जीवविज्ञान की कक्षा में मानव प्रजनन पढ़ाया जाना था, लेकिन संयोग से उस दिन ईशान स्कूल में नहीं था। गगन ने बाद में मज़ाक किया, "तू बच गया, सब कुछ दिखाया।" लेकिन ईशान को यह संयोग नहीं लगा। उसे लगा जैसे कोई दिव्य व्यवस्था उसे अभी तैयार रख रही हो। उसने गगन से कहा, "अगर मैं वह सब देख लेता, तो आग जल्दी ठंडी हो जाती। कुछ रहस्य को थोड़ा जलना चाहिए।"

गगन ने कहा, "कृष्ण और गोपियों जैसा?" ईशान चौंका, "तुझे यह सब कैसे पता?" गगन हँसा, "नानी कहानियाँ सुनाती थीं। सब लोग उसे काम समझते हैं, पर वह तो प्रेम की लहर थी।"

ईशान की आँखें चमक उठीं, “हाँ, वही! वह संख्या का खेल नहीं था, वह प्रेम की क्षमता थी—बिना टूटे, बिना चाह में गिरे, सबको समेट लेने की क्षमता। वही रस नृत्य है।”

एक शाम वह पुस्तकालय में भारतीय रहस्यवाद की किताब पलट रहा था। मायरा की कल्पना आते ही ऊर्जा उसकी रीढ़ में बहने लगी। उसने आँखें बंद कीं। वहाँ मायरा थी—देह नहीं, प्रकाश। फिर वह दृश्य बदल गया और दादा गुरु ध्यान मुद्रा में मुस्करा रहे थे। दोनों छवियाँ एक सुनहरे गोले में विलीन हो गईं। वह देर तक बैठा रहा, समझ नहीं पाया कि ध्यान था या स्वप्न।

रात में वह अजीब समय पर जागने लगा, उसकी रीढ़ जीवित हो उठती। यह कामुक नहीं था, बल्कि सूक्ष्म था, जैसे सिर के पीछे कोई सुनहरे धागे डाल रहा हो। उसने गगन से कहा, “मैं रीढ़ से सपना देख रहा हूँ।” गगन हँसा, “तू ज़्यादा सोया कर।” ईशान ने कहा, “नहीं, मुझे और जागना है।”

स्कूल के तालाब के पास एक दिन वह और मायरा खोई हुई वॉलीबॉल लेने गए। वे अकेले थे। धूप पेड़ों से छनकर गिर रही थी। गेंद उठाते समय उसकी उँगलियाँ उसकी उँगलियों से छू गईं। एक पल के लिए सब रुक गया। न पक्षी, न हवा। और फिर एक मीठी आग उसकी रीढ़ में ऊपर दौड़ गई—पुरानी इच्छा नहीं, बल्कि दिव्य मिठास। उसने हाँफते हुए उसकी ओर देखा। मायरा ने पूछा, “ठीक हो?” ईशान ने धीमे से कहा, “शायद मैं अभी भगवान से मिलकर आया हूँ।” वह हँसी, पर उसके गाल हल्के लाल हो गए। शायद उसने भी महसूस किया था।

उस साल ईशान ने ऊर्जा का रहस्य जाना—वह तर्क नहीं मानती, वह वहाँ बहती है जहाँ प्रेम, अर्थ और रहस्य होता है। दादा गुरु की शिक्षा भीतर गूँजने लगी—काम जब पीछा न किया जाए तो प्रेम बन जाता है, प्रेम जब पकड़ा न जाए तो भक्ति बनता है, और भक्ति जब समर्पित हो जाए तो मुक्ति बन जाती है।

हर बार मायरा का स्मरण आता, ईशान उसे दबाता नहीं। वह आकर्षण की आग को उठने देता, फिर उसे ऊपर की ओर मार्ग देता। ध्यान में उसका केंद्र आज्ञा चक्र बन गया। कई बार बिना कारण आँसू बहते, और आनंद उसकी किशोर बेचैनी के भीतर से टपकने लगा।

एक तूफ़ानी शाम उसने डायरी में लिखा, “अब मुझे उसकी त्वचा नहीं छूनी, मुझे उसके प्रकाश को छूना है। अब मुझे यह भी नहीं चाहिए कि वह मुझे चाहे, बस यह चाहता हूँ कि वह भी वही नदी पाए जो मुझे बहा रही है। यह प्रेम किसी को पाना नहीं चाहता, यह विलीन होना चाहता है।” फिर उसने लिखा, “शायद वह पहले ही मेरी गुरु बन चुकी है।”

बरसात चली गई। साल भी चला गया। लेकिन ऊर्जा बनी रही। जो बिना शब्दों की चिंगारी थी, वह अब बिना किनारों की नदी बन चुकी थी। और ईशान शर्मा, जो कभी अपनी इच्छा से डरता था, अब उसके जल पर प्रेमी साधक की तरह तैर रहा था—यह जाने बिना कि वह उसे कहाँ ले जाएगी, पर पहली बार पूरी तरह निर्भय होकर।

अध्याय 8: कमंडलु का क्षण और कक्षा का तनाव

चाक की धूल और नीरस पाठों से भरा वह दिन अचानक एक मासूम मज़ाक से जगमगा उठा, जो वर्षों तक ईशान की स्मृति में जीवित रहने वाला था। यह क्षण रसायन प्रयोगशाला में आया, जब उसने एक अजीब आकार की काँच की वस्तु उठाई—एक आसवन फ्लास्क, मुड़ी हुई, सुंदर, और एक हैंडल जैसी आकृति लिए हुए। मायरा, जो प्रतीकों को तुरंत पकड़ लेने वाली और हल्की शरारत में निपुण थी, हँसते हुए बोली, "यह बाबा का कमंडलु है क्या?" ईशान एक पल को ठिठक गया, फिर धीरे से मुस्करा दिया। उसके कहने के ढंग में कुछ था—न उपहास, न श्रद्धा—बस एक सहज खेल और एक अजीब परिचय। वह शब्द प्रयोगशाला की दीवारों से कहीं आगे तक गूँज गया। कमंडलु, योगी का जलपात्र, वैराग्य और विवेक का प्रतीक होता है, और यह बात एक ऐसी लड़की के मुख से आना, जिसकी उपस्थिति ईशान के भीतर वैराग्य से बिल्कुल उलटी अनुभूतियाँ जगाती थी, किसी गहरे संकेत की तरह लगी। मायरा अपने काम में लग गई, शायद यह जाने बिना कि उसने क्या छोड़ दिया है, लेकिन ईशान उस क्षण को ऐसे सँभालकर रखने लगा जैसे कोई साधु अपना कमंडलु रखता है—पानी के लिए नहीं, उसके अर्थ के लिए।

एक सप्ताह बाद, जैसे वह स्मृति भीतर जड़ें जमा चुकी हो, ईशान गगन के साथ पुराने पीपल के नीचे बैठा था। हल्की हवा धूल को हिला रही थी। गगन हँसते हुए बोला, "मुझे याद है, पिछले हफ्ते मायरा तेरे पीछे दौड़ी थी, चिल्लाते हुए—बाबा ईशान, अपना कमंडलु दो—बस इसलिए कि तू वह अजीब फ्लास्क पकड़े था।" ईशान ने मुस्कराते हुए कहा, "उसे लगा मैं कोई घूमता साधु हूँ।" गगन ने चिढ़ाते हुए पूछा, "वैसे सच बता, साधु लोग कमंडलु क्यों रखते हैं? पुराने ज़माने का थर्मस ही तो नहीं है?" ईशान का चेहरा गंभीर हो गया। "कमंडलु सिर्फ पानी का पात्र नहीं है, गगन, वह ऊर्जा का प्रतीक है। खासकर मूलाधार की ऊर्जा का। जो साधु अपनी शक्ति को बिखरने नहीं देता, वह उसे सहेजता है—बूँद-बूँद करके। इसी कारण वे आशीर्वाद या शाप देते समय उससे जल छिड़कते हैं, पर असली क्रिया जल में नहीं, उस संचित ऊर्जा को संकल्प से प्रवाहित करने में होती है।" गगन ने धीमे से सिर हिलाया, जैसे कुछ समझ गया हो।

गगन से यह सब कहते हुए ईशान को मायरा के साथ बिताए हल्के दिन याद आ गए, जब मज़ाक भी गर्माहट देता था और शब्दों में समझे जाने का सुख होता था। लेकिन किशोरावस्था का वातावरण ऐसा होता है जहाँ यह सहजता ज़्यादा देर टिकती नहीं। जल्द ही तनाव दरवाज़े के नीचे से घुसती परछाइयों की तरह आने लगा—पहले हल्का, फिर स्पष्ट। अनजली, जो पहले ट्यूशन में खुलकर मुस्कराती थी, चुप रहने लगी। एक दिन उसका मन फूट पड़ा। "मायरा मुझे जैसे देखती ही नहीं। शहर से है तो क्या हुआ, क्या वह हमसे ऊपर हो गई? हम सब दूर से आते हैं, मैं तो उससे भी दूर से आती हूँ।" उसके शब्द ईशान को बेचैन

कर गए। वह जानता था मायरा निर्दयी नहीं है, पर अनजली झूठ भी नहीं बोल रही थी। मायरा के भीतर सचमुच एक दूरी थी, जो इरादे से नहीं, स्वभाव से आती थी। ईशान ने संतुलन रखते हुए कहा, "शायद अनजाने में हो। शायद वह लड़कियों से ही संकोच करती हो।" अनजली ने उसे कड़वाहट से देखा, "या शायद तुम बस उसका पक्ष ले रहे हो क्योंकि तुम–" वाक्य अधूरा रह गया, लेकिन अर्थ हवा में लटक गया।

इसके बाद मायरा कुछ दूर-दूर रहने लगी। उसकी आँखें, जो पहले शरारत से चमकती थीं, अब ईशान की ओर आते ही कहीं और चली जातीं। शायद उसने अनजली की बात सुन ली थी, शायद उसने ईशान की चुप्पी को गलत समझ लिया था। उसने कुछ कहा नहीं, पर उसकी चुप्पी पूरी किताबें बोल रही थी।

इसी बीच एक और क्विज़ प्रतियोगिता हुई, इस बार विनोद नाम के तेज़ दिमाग़ लड़के के साथ। ईशान ने आश्चर्यजनक आत्मविश्वास से उत्तर दिए, हँसी भी जोड़ी, और पहली बार वह केवल शांत लड़का नहीं रहा, बल्कि एक उपस्थिति बन गया। प्रतियोगिता के बाद, जब तालियाँ थमीं, एक लड़की आगे आई, गुलाब और एक पर्ची देते हुए बोली, "क्या तुम मुझे अपनी धर्म बहन स्वीकार करोगे?" सब चुप हो गए। किसी ने हँसी दबाई। ईशान के कान जल उठे। तभी उसकी असली बहन रंजना आगे आई और शांत दृढ़ता से बोली, "रक्षाबंधन पवित्र है, इसे नाटक मत बनाओ।" लड़की शर्मिंदा होकर पीछे हट गई। ईशान ने मन ही मन रंजना को धन्यवाद दिया। उसी ने तो महीनों पहले बड़े प्रयास से उसका स्कूल स्थानांतरण करवाया था –शहर के उस शोर भरे स्कूल से यहाँ, जहाँ ईशान को मायरा मिली और जीवन की दिशा बदली।

उस रात, नीम के पेड़ के पीछे से चाँद उगा तो ईशान ने महसूस किया कि वह कितना बदल चुका है। वह दूसरों के लिए नहीं, खुद के लिए महत्त्वपूर्ण बन गया था। लेकिन इस सबके बीच मायरा की चुप्पी एक पीड़ा बनकर रह गई थी। वह उसे समझाना चाहता था, कहना चाहता था कि तटस्थता विश्वासघात नहीं होती, पर मौन के संसार में शब्दों की कोई जगह नहीं होती।

कक्षा का वातावरण बदल गया था। कुछ सहपाठी उस तनाव को खेल बना चुके थे। फुसफुसाहटें, नज़रें, संकेत। मायरा कुछ नहीं कहती थी, ईशान भी नहीं, पर धाराएँ तेज़ होती जा रही थीं। विनोद अब मायरा के आसपास रहने लगा–हल्के मज़ाक, ज़रूरत से ज़्यादा तारीफ़, उसकी कॉपी पर उँगलियाँ टिकाना। मायरा सहती रही, लेकिन उसकी आँखें ईशान से पूछती थीं–क्या तुम कुछ नहीं कहोगे? ईशान चुप रहा। वह बाज़ार में खड़े साधु की तरह सब देखता रहा, भीतर सब बदलता रहा। लोग उसे "मरा हुआ प्रेमी" कहने लगे, वह मुस्करा दिया। उसे दिखावे की लहरों से अधिक गहरी शांति प्रिय थी।

फिर भी वह सब देखता था—मायरा की उदासी में बदली आवाज़, सोचते समय कलम घुमाने की आदत, और उसकी आँखों का पीछा करना। वे अलग-अलग संसारों से थे—वह तेज़, छोटी, चिड़िया जैसी; वह लंबा, स्थिर, देवदार जैसा। उसके जीवन में मॉल और सिग्नल थे, उसके जीवन में खेत और आम के पेड़। वे छुए थे, पर क्या मिल सकते थे? फिर भी आकर्षण बना रहा, क्योंकि यह मिलन का नहीं, रूपांतरण का आकर्षण था—चंद्रमा जैसा, जो समुद्र को छुए बिना भी ज्वार उठाता है।

एक दिन फ़ाइल समेटते हुए मायरा ने धीरे कहा, "तुम बदल गए हो।" ईशान ने शांत स्वर में कहा, "या शायद मैं अपने भीतर आ गया हूँ।" उसने उसे देखा—आकांक्षा और पछतावे के बीच। "पहले तुम आँखों से सुनते थे, अब संतों की तरह सुनते हो।" ईशान ने कहा, "मैं अब भी सुनता हूँ, बस और गहराई से।" वह कुछ नहीं बोली, बस मुस्कराई—एक ऐसी मुस्कान जिसमें विश्वास भी था और असमंजस भी।

महीने बीतते गए। परीक्षा का दबाव बढ़ा, नाटक कम हो गया। अनजली ने नए दोस्त बना लिए। मायरा छुट्टियाँ ज़्यादा लेने लगी। ईशान भीतर की ओर और मुड़ गया। उनकी धाराएँ अब अलग दिशाओं में मुड़ने लगी थीं। फिर भी वह उस कमंडलु के क्षण को नहीं भूला। हर बार प्रयोगशाला में वह वस्तु उठाते समय उसे मायरा की हँसी याद आती—वह निकटता, वह हल्कापन। और उसे समझ आने लगा कि शायद प्रेम का पहला रूप टिकने के लिए नहीं होता, बल्कि किसी और रूप में बदलने के लिए होता है—मंत्र की तरह, जो एक बार बोला जाए, पर जीवन भर गूँजता रहे।

और इस तरह, युवावस्था की देहलीज़ पर खड़ा ईशान, मायरा को अपनी बाँहों में नहीं, अपनी आत्मा के रिक्त स्थानों में लेकर चलने लगा। एक सच्चे वैरागी की तरह—जो प्रेम को त्यागता नहीं, उसे रूपांतरित करता है। जिसने उसे साधुओं और कमंडलु का मज़ाक उड़ाते हुए छेड़ा था, उसी ने अनजाने में उसे उसका रूपक और उसका मार्ग दे दिया था। वही, जो उसकी गुरु बनी।

अध्याय 9: वह मौन जो बोल उठा

वह धीमे अंत का ग्रीष्मकाल था—ऐसा समय जब पंखुड़ियाँ हवा से नहीं, बल्कि समय के फैलते हुए आलस्य से गिरती हैं। स्कूल के गलियारे अब कुछ खोखले से लगने लगे थे, हालाँकि उनमें अब भी हँसी और हल्की शरारत की आवाज़ें गूँजती थीं। लेकिन ईशान के भीतर कुछ बदल चुका था। एक गहरा मौन उसके भीतर आकर बस गया था—अनुपस्थिति से पैदा हुआ मौन नहीं, बल्कि आगमन से उपजा हुआ मौन। उसके भीतर कुछ आ पहुँचा था, और वह कुछ था—शांति।

मायरा, इसके विपरीत, अपने भावों में और तीखी हो गई थी। उसका चेहरा अब विरोधाभासों का चित्र था। जहाँ पहले हल्की शरारत और शहद-सी दृष्टियाँ थीं, अब वहाँ अनकहे प्रश्नों की झलक थी—न पूछे गए, न सुलझे हुए, शायद सुलझाए भी न जा सकने वाले। उनकी मुलाकातें अब कम हो गई थीं, लेकिन जब भी होतीं, वे हज़ार अनकहे संवादों का भार लेकर आतीं।

एक बार स्थानीय मेले में मंदिर के पास अचानक उनकी आँखें मिलीं—वही आँखें जो कभी एक ही स्वप्न में बहती थीं। मायरा का चेहरा एक पल के लिए कठोर हो गया। उसकी भौंहें सिकुड़ गईं, क्रोध से नहीं, बल्कि जैसे वह किसी पुराने, घिसे हुए ग्रंथ में कुछ पढ़ने की कोशिश कर रही हो। उसने कुछ नहीं कहा। ईशान ने भी नहीं। वह क्षण ऐसे गुज़र गया जैसे पल भर के लिए सूरज को ढक कर फिर हट जाने वाला बादल।

लेकिन उस मौन में ईशान ने पीड़ा देखी। केवल उसकी नहीं, बल्कि उस सामूहिक पीड़ा को, जो सुंदर चीज़ों के चुपचाप टूट जाने से जन्म लेती है। उसकी आँखें बिना बोले आरोप कर रही थीं—जैसे पूछ रही हों कि उसने इतनी पवित्र चीज़ को छोड़ कैसे दिया, और अब वह उसे प्रेमी की तड़प से नहीं, संत की शांति से क्यों देख रहा है।

उसने उसे दोष नहीं दिया उस संदेह के लिए, जो कभी उसकी आँखों से निकल आया था—जैसे वह आहत हुई हो, छुई गई हो, या धोखा खा गई हो। वह क्षण उसे आज भी चुभता था, अपराधबोध से नहीं, क्योंकि वह जानता था कि उसने कुछ गलत नहीं किया, बल्कि इसलिए कि उस क्षण ने विश्वास को तोड़ दिया था। फिर भी मायरा ने उस संदेह के खंजर को उतनी ही जल्दी वापस खींच लिया था, जितनी जल्दी निकाला था, और उसकी आँखों में जो पश्चाताप उतरा था, वह ईशान कभी भूल नहीं पाया।

उसे वह अजीब क्षण साफ़ याद था—एक पल के लिए उसका शरीर सख़्त हो गया था, उसकी आँखों में किसी पुरानी चेतावनी की चमक थी, और अगले ही पल उस पर ग्लानि की छाया पड़ गई थी, जैसे कोई देवी अपने ही अपराध पर करुणा दिखा रही हो। एक ही साँस में भय

और क्षमा–उस दोहरे अनुभव ने ईशान को ऐसे झकझोर दिया जैसे बिजली किसी पुराने वृक्ष को चीर दे।

उसके बाद भी ईशान ने कुछ नहीं कहा। मौन उसका स्वभाव बन गया था। वह कृष्ण को समझने लगा था–जो प्रेम में नाचते हैं, पर बँधते नहीं, जो दूरी में रहकर भी मुस्कराते हैं, जो निकटता को कभी ज़ोर से नहीं माँगते। कृष्ण की तरह ईशान बाहर से जुड़ा दिखता था, लेकिन भीतर वह ध्यान के शिखर पर बैठा था। उसका प्रेम अब संसार का प्रेम नहीं रहा था; वह आत्मा का आत्मा की ओर लौटता हुआ प्रेम बन गया था।

और मायरा–वह कभी संसार के लिए उसका दर्पण थी। उसकी हँसी पहली वर्षा की तरह लगती थी, उसका उत्साह उसे ज्ञान की ओर धकेलता था, और उसकी डाँटें किसी भी शास्त्र से ज़्यादा जगा देती थीं। हर रूप में उसने एक जीवित गुरु का काम किया था, अनजाने में उसके भीतर के प्रवाह को दिशा दी थी।

उसे वे शुरुआती दिन याद आए जब जीवविज्ञान की अध्यापिका उसकी प्रशंसा करती थीं और मायरा अपनी सहेलियों के बीच बैठी गर्व से मुस्कराती थी। "वह इसके योग्य है," वह ऊँची आवाज़ में कहती, जैसे दुनिया के सामने उसकी प्रतिभा पर मुहर लगा रही हो। उसका विश्वास ईशान के भीतर केवल अंकों के लिए नहीं, अर्थ के लिए प्रयास करने की आग जलाता था।

उसकी सीख हमेशा मीठी नहीं होती थी। कभी-कभी वह मज़ाक में लिपटी हुई कठोर सच्चाई फेंक देती थी–"लोग भ्रम में समय बर्बाद करते हैं, अगर गंभीरता से लिया जाना है तो कुछ बनो।" एक बार उसने यह पूरी कक्षा में कहा था। उस दिन वह चंचल लड़की नहीं थी, वह स्कूल की वर्दी में छिपी हुई एक ऋषि थी।

ईशान के चिंतन की जड़ें केवल मायरा तक सीमित नहीं थीं। बचपन में उसका एक चचेरा भाई गोविंद था–ऊर्जा से भरा, शरारती, मेहनती। जब वह दूर चला गया, ईशान का मन खाली हो गया था। अजीब बात यह थी कि जब मायरा उसके जीवन में आई, तो उसमें उसे उसी भाई की झलक मिलने लगी–वही चंचलता, वही आग, वही कोमल विद्रोह। जैसे चिंतन की धारा ने केवल अपना रूप बदल लिया हो।

इन भावनात्मक लहरों के बीच भी ईशान संयम में रहा। उसने कभी प्रेम की घोषणा नहीं की, कभी प्रस्ताव नहीं रखा। वह सोचता था कि जब वह "कुछ बन जाएगा", तब बोलेगा। कभी यह संयम उसे महान लगता था, कभी कायरता। सच इन दोनों के बीच था–उसके भीतर एक मौन युद्ध चल रहा था। आत्मा कहती थी प्रतीक्षा करो, संसार कहता था आगे बढ़ो। उसने आत्मा की सुनी।

समय आगे बढ़ता गया। डिग्रियाँ मिलीं, ज़िम्मेदारियाँ आईं, और वह एक तय विवाह के माध्यम से गृहस्थ जीवन में प्रवेश कर गया। लेकिन उसकी आंतरिक प्यास कभी बुझी नहीं। उसके लिए सच्ची सफलता कुंडलिनी का जागरण थी—वह अवस्था, जहाँ इच्छा भी सपना नहीं देख पाती। और जब वर्षों बाद ध्यान के गहरे मौन में वह हुआ, तब उसने जाना कि वह पहुँचा नहीं, बल्कि शुरू हुआ है।

उस बोध की अवस्था में सब गिर गया—काम, भय, अहंकार, महत्वाकांक्षा। मायरा की स्मृति अब तड़प या दुःख नहीं रही, वह पवित्र हो गई—उसके जीवन के शास्त्र का एक श्लोक। वह उसे खोया हुआ प्रेम नहीं, बल्कि सीखा हुआ पाठ दिखने लगी। उनकी कथा रूप में भले अधूरी रही हो, सार में वह पूर्ण थी।

भाग्य ने उन्हें एक बार फिर मिला दिया—गुलमोहर के पेड़ों से ढकी एक सड़क पर, संयोग से। मायरा ने उसे देखा, भौंहें थोड़ी सिकुड़ी हुईं, होंठ मौन। चेहरे पर हल्का सा दर्द, शायद झुँझलाहट। ईशान ने न समझाया, न सफ़ाई दी, न क्षमा माँगी। क्योंकि वह उदासीन नहीं था, बल्कि इतना सजग था कि उसकी यात्रा में हस्तक्षेप न करे।

वह जानता था—जागरण दिया नहीं जा सकता, वह अपनी ही राख से उठता है। अगर उसका क्षण आएगा, तो अपने समय पर आएगा। उसका कार्य समाप्त हो चुका था। वह प्रेमी नहीं, साक्षी बन चुका था।

और इस तरह उसने पूरी तरह छोड़ दिया—कोई संभावना नहीं, कोई "क्या होता अगर" नहीं। जीवन ने अपनी धारा चुन ली थी। वह अपनी दिशा में, वह अपनी। समुद्र एक ही था।

कुछ ही समय बाद ईशान का चयन एक दूरस्थ चंद्र विश्वविद्यालय में हुआ। उसने उसे पलायन नहीं, विस्तार की तरह स्वीकार किया। जैसे नदी बहाव का विरोध नहीं करती, वैसे ही उसने समर्पण किया। उसे नहीं पता था कि भविष्य में वह फिर चंद्रमा जाएगा—इस बार छात्र नहीं, शोधकर्ता के रूप में। और यहीं से उसकी ब्रह्मांडीय यात्रा का नया अध्याय शुरू होगा। क्योंकि समान ही समान को खींचता है—यह आकर्षण का नियम है।

उसने मायरा को कोई पत्र नहीं लिखा, न खोजा, न कोई संकेत छोड़ा। क्योंकि जब प्रेम आध्यात्मिक अग्नि बन जाता है, तो वह मिलन नहीं माँगता—वह केवल प्रकाश देता है।

और कहीं, शायद संसार के किसी कोने में, मायरा भी खड़ी होगी, प्रश्नों के साथ। एक दिन, जब मौन उस पर भी वैसे ही उतरेगा जैसे बेचैन झील पर संध्या उतरती है, वह उसी सत्य को महसूस करेगी—शब्दों में नहीं, दृश्य में नहीं, बल्कि अचानक आई हुई शांति में।

उस शांति में ईशान वहाँ होगा—स्मृति बनकर नहीं, स्पंदन बनकर।
उस रूप में नहीं जिसे उसने प्रेम किया था,
बल्कि उस रूप में—जो बन चुका था।

अध्याय 10: मौन शोकगीत

चंद्र स्थित पशु-चिकित्सा विश्वविद्यालय की हवा बिल्कुल अलग थी। यहाँ न शहर के हॉर्न थे, न मंदिर की घंटियाँ, न स्कूल के गलियारों में गूँजती हँसी। यहाँ दिन पशुओं की धीमी आवाज़ों, खुरों की लयबद्ध चाल और वैज्ञानिक यंत्रों की यांत्रिक गूँज से बनते थे। इस अपरिचित संगीत के बीच ईशान आ पहुँचा था, जैसे किसी परिचित कविता की एक पंक्ति को निकालकर किसी अजनबी छंद में रख दिया गया हो। फिर भी, उस पंक्ति की तुक बनी रही, और उसी में वह अपने जीवन की नई लय खोजने लगा।

विश्वविद्यालय की चाँदनी रातें लंबी और अत्यंत शांत थीं। ईशान अक्सर अकेले यूकेलिप्टस के ऊँचे पेड़ों के बीच टहलता, जो परिसर की सीमा पर खड़े होकर फुसफुसाते रहते थे। उस मौन में उसका आंतरिक संगीत और गहरा हो गया था। उसके भीतर एक अनोखी शांति उतरने लगी थी—वह शांति जो पाने से नहीं, छोड़ देने से आती है। मायरा का चेहरा अब भी अतीत की दरारों से होकर उसके मन में आ जाता था, किसी भूले हुए गीत के सुर की तरह—न तेज़, न तीखा, बल्कि खुशबू की स्मृति जैसा, या बचपन में देखी किसी मुस्कान की परछाईं जैसा।

कभी-कभी वह पशुशाला के पास लगी अकेली बेंच पर बैठ जाता, जहाँ चाँदनी भी मुश्किल से पहुँचती थी। वहाँ वह गहरे चिंतन में डूब जाता—आँखें अधखुली, देह स्थिर, साँसें हवा की गति में ढली हुई। गायें, भैंसें, और वहाँ घूमते मौन कुत्ते उसे ऐसे देखते जैसे शिष्य अपने गुरु को समाधि में देखते हों। मायरा उसके हृदय से पूरी तरह गई नहीं थी, पर उसका रूप बदल गया था। अब वह एक मंत्र की तरह थी—न पाने के लिए, न चाहने के लिए, बल्कि समझकर विलीन हो जाने के लिए।

एक बार मनोविज्ञान पर आयोजित एक सेमिनार में एक युवा प्रोफेसर ने अधूरे संबंधों और स्मृति के प्रभाव पर व्याख्यान दिया। उन्होंने बताया कि कैसे अधूरी भावनाएँ स्वप्नों, भावनात्मक दोहराव और मन के भीतर गूँज बनकर लौटती रहती हैं। ईशान चुपचाप सुनता रहा, भीतर सिर हिलाते हुए, क्योंकि वह स्वयं को उन्हीं उदाहरणों में पहचान रहा था। उसका आघात किसी हिंसा या अस्वीकार का नहीं था, बल्कि उस प्रेम का था जो कभी पूरा जन्म नहीं ले पाया—एक ऐसा शिशु जो रो भी नहीं सका।

उस शाम, जब परिसर तारों के नीचे साँस ले रहा था, ईशान ठहर गया। आकाश साफ़ था, धूल से अछूता। उसने ऊपर देखा और भीतर ही भीतर कुछ फुसफुसाया—न शब्द, न प्रार्थना, केवल एक कंपन। उसे फिर मायरा की आँखें महसूस हुईं, अब तड़प में नहीं, बल्कि शांति में। वह स्मृति अब चुभती नहीं थी, वह बस उसके भीतर एक शांत झील पर खिले कमल की तरह ठहर गई थी।

एक दिन संस्कृत साहित्य और आयुर्वेदिक पशु-विज्ञान के ज्ञाता एक वरिष्ठ प्रोफेसर ने उसे नीम के नीचे लिखते देखा। वे पास आए, बैठ गए और बिना पूछे बोले, "ईशान, क्या तुम जानते हो, ऋषियों के लिए वैराग्य का अर्थ 'न महसूस करना' नहीं था? वैराग्य सबसे तीव्र अनुभूति थी—इतनी गहरी कि वह किसी एक नाम या शरीर में बँध नहीं सकती थी।" ईशान ने हल्की मुस्कान के साथ कहा, "शायद अब मैं उसे समझने लगा हूँ।" प्रोफेसर ने उसके कंधे पर हाथ रखते हुए कहा, "तो फिर लिखो। उसकी कथा लिखो, अपनी भी। दर्द को कविता बनने दो और प्रेम को प्रकाश।"

उसी रात ईशान ने *वह जो मेरी गुरु बनी* का पहला मसौदा लिखना शुरू किया। न छपवाने के लिए, न पढ़वाने के लिए, बल्कि इसलिए कि उसका भीतर बाहर जन्म ले सके। पहला अध्याय उसने उनके आरंभ पर नहीं, उनके अंत पर लिखा—उनकी अंतिम मौन भेंट पर, जहाँ उसके भीतर गहरी शांति थी और उसकी आँखों में अब भी पीड़ा। उसने लिखा कि जब उनकी दृष्टियाँ मिलीं, तो उसका मन मौन में डूब गया, जबकि उसका मन अब भी तूफ़ानों में था। वह कम विकसित नहीं थी, वह बस अपनी यात्रा पूरी नहीं कर पाई थी। शायद उसका मौन क्रोध ही उसकी अंतिम परीक्षा थी, और ईशान उसे रोक नहीं सकता था। समझाना हिंसा होता, उपदेश देना तितली का कोकून फाड़ने जैसा होता। इसलिए वह चुपचाप चला गया।

किताब स्वयं लिखती चली गई—पन्ना दर पन्ना, जैसे बारिश में पत्तों से टपकती बूँदें। ईशान ने अपने चिंतन, अपने स्वप्न, उसके साथ की बचपन-सी हँसी, और वे शरारतें लिखीं जिन्हें वे कभी जी नहीं पाए। उसने क्विज़ प्रतियोगिता, अनजली की बस यात्राएँ, गगन की मित्रता, और वह मासूम मज़ाक लिखा जिसने समय रोक दिया था। उसने वह क्षण भी लिखा जब मायरा ने एक गलतफ़हमी में उस पर संदेह किया था और फिर तुरंत पश्चाताप में झुक गई थी—और कैसे उस एक दृश्य ने उसे सिखाया कि अनुभूति कितनी नाज़ुक होती है, कि जो दिखता है वही सत्य नहीं होता, और फिर भी उसी नाज़ुकता में दिव्यता छिपी होती है।

महीने बीते। किताब बढ़ती गई और ईशान भी। वह न ऋषि बना, न संत, पर वह भीतर से मौन हो गया। हँसी में भी एक ठहराव आ गया, भीड़ में भी वह अदृश्य संगत महसूस करने लगा। वह दूसरों की आँखों में गहराई देखने लगा, मज़ाक के पीछे छिपा दुःख, और अध्यापकों की आवाज़ में आदर्शों की तड़प।

फिर एक वसंत की सुबह आई। स्कूल का एक पुराना मित्र संदेश लेकर आया—मायरा अब विवाह कर चुकी थी, दिल्ली के पास एक कस्बे में बसी थी, दो बच्चे थे, एक छोटे स्कूल में पढ़ाती थी, सोशल मीडिया पर सक्रिय थी पर निजी जीवन कम दिखाती थी। ईशान मुस्कराया। न ईर्ष्या, न पछतावा—बस एक स्वीकृति। जैसे एक ही नदी में साथ बहे दो जहाज़

अब अलग-अलग समुद्रों की ओर जा रहे हों। उसने आँखें बंद कीं और उसके भीतर बसे उस सार्वभौमिक आत्मा को आशीर्वाद भेजा।

उस रात उसने अपने कमरे में एक दीप जलाया—अनुष्ठान के लिए नहीं, प्रतीक के लिए। फिर उसने अपनी पुस्तक की अंतिम पंक्ति लिखी—"जब उसका नाम मेरे होंठों से मिट गया, उसने मेरे मौन में घर बना लिया।"

उसे नहीं पता था कि वह पुस्तक कभी उसे मिलेगी या नहीं, किसी तक पहुँचेगी भी या नहीं। लेकिन लिखना ही पर्याप्त था। उस क्षण के बाद ईशान किसी प्रतीक्षा में नहीं रहा—न मिलन की, न पहचान की। वह बस बहता रहा, जैसे हमेशा से बहता आया था, पर अब बिना अवरोध के, बिना अशांति के—केवल कृपा में।

और उस कृपा में मायरा अब भी जीवित थी—स्त्री के रूप में नहीं, प्रेम के रूप में नहीं, बल्कि उसकी आध्यात्मिक यात्रा की धड़कन के रूप में। वह सचमुच उसकी गुरु बन चुकी थी।

अध्याय 11: स्वप्न में बोध

वह एक शांत रविवार की सुबह थी। केतली की हल्की-सी सीटी से भाप उठ रही थी और धूप की किरणों के साथ ईशान शर्मा के छोटे से अध्ययन कक्ष में फैल रही थी। उसका हिमालयी घर, जो अब उसका आध्यात्मिक आश्रय बन चुका था, देवदारों और मौन के बीच बसा था। संसार बदल चुका था। गति तेज़ हो गई थी, तकनीक ने अजीब रूप ले लिए थे, लोग ठहरना भूल गए थे। लेकिन ईशान—वह जानबूझकर धीमा हो गया था।

बावन वर्ष की उम्र में उसकी दाढ़ी में नमक-मिर्च की तरह सफेदी घुल चुकी थी, कुर्ते के कॉलर पर हल्के से मुड़ती हुई, और आँखों में अब भी तेज़ी थी, पर उसके चारों ओर एक कोमलता लिपटी हुई थी—वह कोमलता जो जीवन केवल उन्हें देता है जिन्होंने गहराई से रोया हो, सच्चे मन से प्रेम किया हो और भीतर से एक से अधिक बार मर चुके हों।

पीतल के गिलास में तुलसी-चाय की चुस्की लेते हुए उसने अपनी पुरानी चमड़े की डायरी खोली—पाइन क्रेस्ट स्कूल के दिनों की। और बिना किसी प्रयास के स्मृतियाँ उमड़ पड़ीं—विचारों की तरह नहीं, बल्कि साँस की तरह जीवित। उसने आँखें बंद कर लीं। और वही स्वप्न फिर शुरू हो गया।

वह सोलह का था, या सत्रह का—अब वे वर्ष धुँधले हो चुके थे। लेकिन वह रात आज भी स्पष्ट थी—एक ऐसी रात जो तड़प से भीगी थी, पीड़ा से पक चुकी थी और ऐसी पवित्रता से भरी थी जिसे उसने कमाया नहीं था, बस अनजाने में पा लिया था। वह मायरा के अंतिम पत्र को सीने से लगाकर रोते-रोते सो गया था। उसकी लिखावट अब भी गरम लग रही थी। दीया आख़िरी बार काँपा था और फिर अँधेरे में विलीन हो गया था।

और तब—वह हुआ। उस स्वप्न में, या जिसे वह अब स्वप्न नहीं मानता था, वह धुंध से भरे एक उद्यान के किनारे खड़ा था। न स्कूल का बगीचा, न दादा जी का बाग़—बल्कि एक और ही लोक, चमेली की सुगंध से भरा हुआ। हवा चमक रही थी। पथ प्रकाशमान था। और वह—अब भी एक लड़का—नंगे पाँव, भारहीन, जीवित प्रकाश से बने एक सर्पिल स्तंभ की ओर बढ़ रहा था।

अब, अपने अध्ययन कक्ष की शांति में बैठा वह फुसफुसाया, "आज भी नहीं जानता कि मैं उस स्तंभ पर चढ़ा था... या वह मेरे भीतर उठ गया था।"

हर चक्र एक स्मृति की तरह खुलता गया। मूलाधार—बचपन की वह शर्म, जब वह एक घायल पक्षी को बचा नहीं पाया था। स्वाधिष्ठान—किशोर इच्छाएँ, प्रेम और पवित्रता का पहला भ्रम। मणिपूर—विद्रोह की आग, विज्ञान परियोजना में विनोद से आगे निकलने का गर्व। अनाहत—

मायरा से प्रेम और उसे छोड़ने का पवित्र घाव। विशुद्ध–दादा जी के अंतिम संस्कार में उसका मौन, और वे सत्य जो वह किसी से कह नहीं पाया। आज्ञा–मिस्टर दत्त के सेवानिवृत्त होने से पहले के आख़िरी व्याख्यान में कौंधा हुआ बोध, "तुम्हारे भीतर जलने वाला हर प्रश्न, किसी भूले हुए उत्तर का उठना है।" सहस्रार–शिखर, जहाँ सब घुल गया।

वह प्रकाश में तैर रहा था। और तभी वे प्रकट हुए–उसके दादा जी और मायरा, अपने-अपने रूप में नहीं, बल्कि एक दीप्त संयुक्त प्रकाश के रूप में। वे एक-दूसरे में विलीन हो गए, जब तक कि एक ही आत्मा, एक ही ज्योति न रह गई। आज भी वह शब्द उसे वैसे ही याद थे जैसे कल ही कानों में फुसफुसाए गए हों–"तुम हमारी ओर नहीं चल रहे थे, तुम अपने भीतर जा रहे थे।"

उस एक वाक्य ने सब कुछ खोल दिया था। सारी खोज, सारी तड़प–कभी किसी और के लिए थी ही नहीं। न मायरा, न ईश्वर। वह तो सदा से आत्मा ही थी, जो मौन में प्रतीक्षा कर रही थी।

उसे याद है उस सुबह जागना और बस जान लेना–बुद्धि से नहीं, भाव से नहीं, बल्कि हर कोशिका में–कि कुंडलिनी जाग चुकी है। उस दिन न कोई चमत्कार हुआ, न दर्शन, न कोई अलौकिक घटना। बस एक ऐसी शांति आई जो हड्डियों तक उतर गई। एक ऐसी स्थिरता जिसे नाम की ज़रूरत नहीं थी।

स्कूल में गगन ने उसे खूब चिढ़ाया था, "अरे ईशान, रातोंरात पूरा बाबा बन गया क्या? अब हम तेरे पैर छुएँ?" सब हँस पड़े थे। वह भी हँसा था। लेकिन भीतर कुछ स्थायी हो चुका था–कुछ प्राचीन, कुछ अपरिवर्तनीय।

आज भी, चाय के प्याले में घूमती भाप को देखते हुए, वह हल्के से मुस्करा दिया। "तू सही था गगन, मैं बाबा बन ही गया... बस भगवा नहीं पहना।"

उस स्वप्न के उसी दिन वह मिस्टर दत्त के पास गया था। उसे आज भी याद है, पुराने बोधि वृक्ष के नीचे हुआ वह छोटा-सा संवाद। "मैंने उसे देखा," ईशान ने कहा था। मिस्टर दत्त ने बिना ऊपर देखे पेड़ को पानी देते हुए पूछा, "और क्या उसने तुम्हें दिखाया कि तुम कौन हो?" "हाँ," ईशान ने फुसफुसाया था, "और यह भी कि मैं कौन नहीं हूँ।" मिस्टर दत्त रुके, उसे देखा और बोले, "कुछ स्वप्न स्वप्न नहीं होते। वे आत्मा का समय की रेखा को लाँघ जाना होते हैं।"

वर्तमान में लौटते हुए, खिड़की से हवा आई। डायरी के पन्ने ऐसे फड़फड़ाए जैसे पंख हों। ईशान ने उस प्रविष्टि पर हाथ फेरा जिसकी पहली पंक्ति थी–"वह जो मेरी गुरु बनी।" वह

पहला प्रयास था, मायरा को समझने का। किशोर प्रेम की तरह नहीं, रोमांटिक आग की तरह नहीं, बल्कि एक जीवित द्वार की तरह–दिव्य शक्ति की उस मूर्ति की तरह जिसने उसके अहंकार को छल से समर्पण में बदल दिया था।

उसने उसे सिखाया नहीं था। वह स्वयं शिक्षा थी। उसने उसे पूरे मन से चाहा था, पर उसने जो जगाया, वह नाम और रूप से परे था, लिंग से परे था, कथा से परे था।

अब, पाँच दशकों की समझ के साथ, उसे उसकी वापसी की कोई चाह नहीं थी। वह कभी गई ही नहीं थी। वह हर पर्वतीय हवा में थी, ध्यान के दौरान गिरते हर मौन आँसू में थी, और हर उस अचानक उठे आनंद में थी जब वह खेतों में बच्चों को तितलियों के पीछे दौड़ते देखता था।

शाम को ईशान अपनी ज़मीन के छोर तक गया, जहाँ एक पुराना पीपल का पेड़ खड़ा था। वह उसके नीचे पालथी मारकर बैठ गया, ठीक वैसे ही जैसे स्कूल के दिनों में बैठता था। नीचे गाँव में दीये जलने लगे थे। मंदिर की घंटी एक बार बजी। दूर कहीं गाय रँभाई।

उसने आँखें बंद कीं–ध्यान के लिए नहीं, सुनने के लिए। खोजने के लिए नहीं, याद करने के लिए। और भीतर से, संध्या की साँस की तरह उठती हुई, उसकी आवाज़ आई–"अब मुझे ढूँढने की ज़रूरत नहीं है, ईशान। जिस दिन तुमने मुझे छोड़ दिया, उसी दिन तुम मुझे बन गए।"

वह मुस्कराया। उसकी साँस गहरी हो गई। आकाश नीलिमा में घुल गया। और एक पूरी तरह जिए गए जीवन के मौन से, एक लड़के का स्वप्न फिर फुसफुसाया–कुछ स्मृतियाँ अतीत की नहीं होतीं। वे द्वार होती हैं। हमारे अनादि आत्मस्वरूप तक–जो सदा प्रतीक्षा करता है, प्रकाश के उस उपवन में।

अध्याय 12: विदाई

साँझ की हवा अब शांत हो चुकी थी। ईशान पीपल के पेड़ के नीचे पालथी मारकर बैठा था, आँखें बंद, चेहरा उस आकाश की ओर उठा हुआ जो अब गहरे जामुनी रंग में रंग चुका था। कविता उसकी आत्मा से निकली एक आह की तरह उसके होंठों से उतर चुकी थी। वह पत्ता, जिसे वह थोड़ी देर पहले हाथ में पकड़े था, अब कब का मौन में उड़ चुका था, लेकिन उसकी अनुभूति अब भी हथेली में वैसी ही टिकी थी, जैसे अतीत से आया कोई संदेश।

और स्मृति के उसी कोमल खिंचाव के साथ ईशान फिर पीछे लौट गया।

मार्च का आख़िरी समय था। सत्र की अंतिम घंटी बज चुकी थी। पाइन क्रेस्ट की लाल ईंटों की इमारतें दोपहर की गर्मी में चमक रही थीं। आम की कलियाँ फूट रही थीं और सीनियर छात्र परीक्षा कक्षों में खो चुके थे। लेकिन ईशान शर्मा, अपने जीवन में पहली बार, उनमें शामिल नहीं था।

वह स्टाफ़ रूम के पीछे पुराने देवदार के नीचे अकेला बैठा था—वही जगह जहाँ कभी मायरा ने अनजली की ज़्यादा उबली चाय पर हँसी उड़ाई थी, जहाँ विनोद मिस्टर दत्त की भारी आवाज़ की नकल किया करता था। गगन ने अब पूछना भी छोड़ दिया था कि वह परीक्षा क्यों नहीं दे रहा। यहाँ तक कि मिस्टर दत्त ने भी केवल कंधे पर हाथ रखकर कहा था, "ईशान, ज़िंदगी की परीक्षाएँ अलग होती हैं। काग़ज़ पर छपी परीक्षा की चिंता मत कर।"

ईशान मुस्कराया था—वही रहस्यमयी मुस्कान जो स्वप्न के बाद से उसके चेहरे पर रहने लगी थी। उसके भीतर कुछ खुल चुका था, कुछ ऐसा जो अब कभी वापस नहीं मुड़ेगा।

"तुम नहीं आ रहे?" एक दिन मायरा ने पूछा था। वे स्कूल की छत पर बैठे थे, पैरों को किनारे से लटकाए।
"परीक्षा देने?" उसने अनजान बनते हुए पूछा।
"ज़िंदगी में," उसने थोड़ी देर बाद कहा।
ईशान ने उसे देखा—सचमुच देखा। वह वही आसमानी नीला कुर्ता पहने थी, जिसमें छोटे-छोटे शीशे धूप में चमकते थे। बाल ढीले बँधे थे, कुछ लटें गाल पर गिर रही थीं। उसके संयम में कुछ अवर्णनीय सुंदरता थी।
"पता नहीं," उसने धीरे कहा, "शायद इस साल मैं यहीं रुककर... बस हवा की बात सुनूँ।"
वह हँसी, लेकिन उसकी आँखें नहीं हँसीं।
"तुम साधु जैसे बोलते हो।"
"शायद मैं बन ही रहा हूँ।"

वे चुप बैठे रहे। पक्षियों की आवाज़ें ही उस खालीपन को भर रही थीं, जिसे उनके दिल शब्दों से नहीं भर सके।

मायरा कॉलेज जा रही थी। दिल्ली। मनोविज्ञान में ऑनर्स। अनजली विदाई भाषण की तैयारी में लगी थी। रंजना प्री-मेड की कोचिंग में डूबी थी। गगन आईआईटी के सपनों में खोया था। विनोद ने हर मॉक टेस्ट पार कर लिया था।
और ईशान?
वह दो दुनियाओं के बीच तैर रहा था।

वह स्कूल आता, कक्षाओं में बैठता, बोलता नहीं। कविता की कक्षा में बैठकर नोट्स लेना भूल जाता। कभी-कभी वह स्कूल की दीवार को ऐसे घूरता पाया जाता, जैसे उससे कुछ खुलकर बोलने वाला हो। एक दिन जब वह कॉपी के पीछे चक्रों के चित्र बना रहा था, मिस्टर दत्त पास आए और बोले, "ईशान, हर घुमाव ऊपर नहीं जाता। कुछ भीतर की ओर भी ले जाते हैं। वह भी एक यात्रा है।"
ईशान ने धीरे सिर हिलाया। उसने किसी को नहीं बताया कि कई बार दिन में भी उसे लगता था कि वह किसी मुलायम परदे के पीछे से सब देख रहा है—जैसे मरकर लौट आया हो, पर जीना अभी पूरी तरह याद न आया हो।

मायरा के जाने से पहले के आख़िरी दिन वह उससे नहीं मिली। न स्कूल में, न देवदार के नीचे, न उस रास्ते पर जहाँ सर्दियों में वे मूँगफली खाते थे।
कोई विदाई नहीं।
कोई पत्र नहीं।
कोई संदेश नहीं।

एक हफ्ते तक ईशान स्कूल के गेट की ओर देखता रहा।
फिर उसने देखना छोड़ दिया।

"ठीक है?" एक दिन गगन ने क्रिकेट की गेंद उछालते हुए पूछा।
"ठीक किसे कहते हो?" ईशान घास पर लेटकर मुस्कराया।
"अब भी हवा को कविताएँ लिखता है?"
"आजकल हवा भी चुप है।"
गगन उसके पास लेट गया। "मुझे भी उसकी याद आती है।"
उन्होंने नाम नहीं लिया।
ज़रूरत भी नहीं थी।

घर में रंजना उसे संदेह से देखने लगी थी।
“भैया, तुमने कुछ लिया है क्या?”
“क्या लिया?”
“पता नहीं... तुम अब असली जैसे नहीं लगते।”
ईशान हँस पड़ा, उसके बाल बिखेरते हुए, “शायद मैं सपना बन गया।”
वह बुदबुदाई, “तुम यूट्यूब के साधुओं से भी ज़्यादा अजीब हो गए हो।”

फिर भी उसने देखा कि ईशान अब तानों पर गुस्सा नहीं करता, बहस में भी उसकी आँखें नरम रहती हैं। वह कई बार घंटों चुप बैठा रहता, न कुछ करता, न कुछ कहता, न ध्यान करता—बस होता।

परीक्षा के परिणाम आए। ईशान आधिकारिक रूप से फेल हो गया था।
प्रधानाचार्य ने उसे बुलाया।
“ईशान, तुम होशियार लड़के हो। क्या हुआ?”
उसने शांति से कहा, “मुझे लगता है, मैडम, मैं इस साल किसी और चीज़ में पास हो गया हूँ।”
वह हैरान रह गईं। फिर बोलीं, “अगले साल आ जाना, सीट रखेंगे।”
ईशान ने हल्का सा झुककर कहा, “धन्यवाद।”

उस गर्मी में वह ज़्यादा नंगे पाँव चलने लगा। पेड़ों के नीचे बैठा रहता। चींटियों को घर बनाते देखता। फूलों से बातें करता। एक दिन उसने चाँद को पत्र लिखा, काग़ज़ की नाव बनाई और गाँव की धारा में छोड़ दी।

वह न खोया था, न टूटा था।
वह बस... किसी और तरंग से जुड़ गया था।

सालों बाद, जब मायरा चेतना की बदली अवस्थाओं पर अपना पहला शोधपत्र लिखेगी, वह अनजाने में ईशान का वर्णन कर देगी—बिना उसका नाम लिए। और दशकों बाद जब ईशान उसे पढ़ेगा, वह मुस्कराएगा। वही पुराना दर्द और शांति फिर उठेगी।

लेकिन तब तक वह जान चुका होगा—कि कुछ विदाइयाँ वास्तव में दीक्षा होती हैं। कि हर मौन अनुपस्थिति नहीं होता। और कि कभी-कभी गुरु इसलिए जाता है ताकि तुम स्वयं बन सको।

पीपल के नीचे बैठे ईशान ने आँखें खोलीं।
कोयल बोली।
हवा ने पत्तों को हिलाया।

वह अब वह लड़का नहीं था।

पर उस लड़के की यात्रा अब भी उसके भीतर जीवित थी—स्मृति की तरह नहीं, प्रकाश की तरह।

एक ऐसा प्रकाश जो गया कभी नहीं था।

अध्याय 13: ब्रह्मांडीय परिसर

पाइन क्रेस्ट स्कूल के पीछे फैले सुनहरे देवदारों के बीच से होकर आती साँझ की धूप तिरछी होकर रास्ते पर गिर रही थी। ईशान शर्मा अक्सर कक्षाओं के बाद इसी रास्ते पर भटकता था। पत्तों की सरसराहट अब भी वैसी ही थी—बचपन की दोपहरों, अधूरे ख्वाबों और मायरा की उस हँसी की फुसफुसाहट से भरी हुई, जब वह कभी उसके साथ यहाँ चली थी। उस अध्याय को बीते वर्षों हो चुके थे—स्वप्न बोध का अध्याय—जो ब्रह्मांड की उस गहरी खामोशी के साथ बंद हुआ था, जिसने ईशान के हृदय पर एक ऐसा उद्देश्य छोड़ दिया था, जो धरती की सीमाओं में समा नहीं सकता था।

अब उगते चाँद की मद्धम रोशनी में वह पुराने पुस्तकालय के पास बने छोटे से तालाब के किनारे बैठा था, जहाँ कभी वह और गगन बैठा करते थे। तालाब अब झाड़ियों से भर गया था, कमल के पत्ते मुरझा गए थे, लेकिन मौन अब भी वैसा ही था—गहरा, बुलाने वाला। स्मृतियाँ बिना बुलाए ही ऊपर आने लगीं। "तुम हमेशा बहुत गहराई में चले जाते हो," मायरा ने कभी मज़ाक में उसकी बाँह छूते हुए कहा था, जब वह किसी कठिन वैदिक पांडुलिपि में बहुत देर तक खोया रहता था। "एक दिन उन गहराइयों में खो जाओगे और लौटना भूल जाओगे।" तब उसने मुस्कराकर कहा था, "शायद सच वहीं है, जहाँ जाने की फुर्सत किसी को नहीं।" यही ईशान का अध्ययन था—किताबों का नहीं, वस्तुओं की आत्मा का। वह तारों के बारे में नहीं पढ़ता था, वह उनमें प्रवेश करता था; चेतना के बारे में नहीं पढ़ता था, वह शब्दों के बीच उसकी साँस सुनता था।

आज भी उसकी उँगलियों में पुराने पन्नों की गरमी थी और उसके हृदय में वह श्रद्धा, जो लोग मंदिरों के लिए रखते हैं। लेकिन संसार श्रद्धा नहीं समझता, वह गति समझता है। उसके अंक अच्छे थे, मज़बूत थे, पर विनोद की तरह चमकदार नहीं। जब बैकुंठ विद्य महाविद्यालय—एक दूरस्थ ग्रह पर स्थित ब्रह्मांडीय विश्वविद्यालय—के लिए आवेदन खुले, तो ईशान का नाम संभावनाओं की गलियारों में फुसफुसाया तक नहीं गया। कमी उसकी क्षमता में नहीं थी, बल्कि उसकी प्रतिभा शोर नहीं मचाती थी; वह प्राचीन वृक्ष की तरह धीरे-धीरे बढ़ती थी—गहरी जड़ें, कम दिखावा। विनोद का चयन हो गया। गगन ने खुशियाँ मनाईं। किसी को नहीं पता था कि ईशान ने भी चुपचाप आवेदन किया था। लेकिन रंजना जानती थी, वह हमेशा जान जाती थी। उसने एक शाम उसे तुलसी की चाय देते हुए कहा, "तुम्हें दुख इसलिए नहीं है कि चयन नहीं हुआ, बल्कि इसलिए कि तुमने विषय का बहुत सम्मान किया। दुनिया तेज़ी का सम्मान करती है, गहराई का नहीं।" ईशान ने हल्की मुस्कान के साथ कहा, "मैंने दिमाग से नहीं, आत्मा से पढ़ा। हर शब्द को जीवित मानकर पढ़ा। शायद इसलिए चमक नहीं पाया।" रंजना ने धीरे कहा, "नहीं, इसीलिए तुम शाश्वत हो।"

कुछ महीने बाद, जब ईशान यह मान चुका था कि शायद उसका मार्ग शांत और अनदेखा ही रहेगा, डाक में एक चाँदी-सा चमकता लिफ़ाफ़ा आया, जिस पर कमल को थामे अर्धचंद्र का चिन्ह था—चंद्र विद्याविश्व, चंद्रमा का पहला अंतरतारकीय विश्वविद्यालय। ईशान बिस्तर के किनारे बैठा रह गया, पत्र उसके हाथों में काँप रहा था। मायरा का नाम उसके मन में प्रकाशस्तंभ की तरह चमक उठा। वह जानती होती, उसे हमेशा पहले पता चल जाता था।

वह चंद्रमा पर बिना किसी शोर-शराबे के पहुँचा—हाथ से लिखे नोट्स, गगन द्वारा दिए गए "गुड वाइब्स" वाले क्रिस्टल और पाइन क्रेस्ट की पुरानी कक्षा की एक तस्वीर के साथ, जिसमें मिस्टर दत्त ब्लैकबोर्ड पर तत्वमीमांसा लिख रहे थे और दिखावा कर रहे थे कि कोई समझ नहीं रहा। जैसे ही उसने परिसर के गुंबद में कदम रखा, उसकी साँस थम गई। यह धरती नहीं थी, फिर भी धरती ही थी—बस और अधिक। चाँदी जैसे बगीचे हवा में तैर रहे थे, बेलें अदृश्य सहारों से लिपटी थीं। कक्षाएँ पाठ के साथ रूप बदलती थीं—कभी रंगमंच, कभी शनि के छल्लों के ऊपर तैरता हुआ चक्र। अलग-अलग आकाशगंगाओं की संस्कृतियाँ यहाँ मिलती थीं—ओरायन के प्रकाशमान प्राणी जो रंगों में बोलते थे, शुक्र ग्रह के मौन साधु जो आत्मा में गाते थे, और एंड्रोमेडा के समय-सर्फ़र जो कहते थे कि वे हर क्षण उल्टा जीते हैं।

लेकिन यह सब ईशान को चौंकाता नहीं था। यह उसे बुला रहा था। क्योंकि यहाँ गहराई छिपी नहीं थी। यहाँ आत्मा गौण नहीं थी। तीसरी रात, जब वह एंटी-ग्रैविटी वेधशाला के पास टहल रहा था, उसने एक गलियारा देखा, जिस पर केवल एक चिह्न था—ॐ। वह भीतर चला गया, जैसे कोई प्राचीन भविष्य उसे खींच रहा हो। अंदर एक वृद्ध स्त्री बैठी थी—रजत बालों में तारे गुंथे हुए, आँखें समय से परे। उसका वस्त्र रात के जल की तरह चमक रहा था, और उसकी उपस्थिति अजीब तरह से परिचित थी। उसने बिना देखे कहा, "ईशान शर्मा, तुम देर से आए हो, पर ठीक समय पर।" ईशान ने कहा, "मैं समझा नहीं।" वह मुस्कराई, "कम लोग समझते हैं। तुम बैकुंठ के लिए थे, वह मस्तिष्क का स्थान है। चंद्र विद्या उनके लिए है जिनके हृदय में आकाशगंगाओं का भार होता है।" उसने पूछा, "आप कौन हैं?" वह बोली, "मैं तुम्हारी गुरु की प्रतिध्वनि हूँ, उस हर क्षण की याद जब तुमने बोलने के बजाय सुना।"

उसके भीतर कुछ काँप गया, फैल गया। उसने पीछे चमकते द्वार की ओर संकेत किया, "यह तुम्हारी पहली परीक्षा है। इसे लिखा नहीं जा सकता, हल नहीं किया जा सकता। तुम तभी पास होगे जब तुम वही बनो, जो तुम हमेशा से थे।" द्वार चमका। ईशान भीतर चला गया।

अचानक वह फिर पाइन क्रेस्ट में था—कक्षा 4बी। गगन काग़ज़ लहरा रहा था, "ईशान, मैंने फोड़ दिया!" मिस्टर दत्त बोले, "ब्रह्मांड हैक कर दिया होगा।" अनजली मायरा से कुछ कह रही थी और मायरा सीधे ईशान को देख रही थी। उस दृष्टि में सब लौट आया—स्वप्न, बोध, गुरु। उसने समझा कि वह केवल प्रेम नहीं थी, वह उसकी जागृति का दर्पण थी। वह धीरे-धीरे

उसकी ओर बढ़ा। "क्या यह सब... सच था?" उसने पूछा। मायरा ने सिर तिरछा किया, "अगर स्वप्न तुम्हें जाग्रत जीवन से ज़्यादा सत्य के पास ले जाए, तो क्या वही सबसे वास्तविक नहीं?" उसकी आँखें भर आईं। "तुम मेरी गुरु बन गईं।" वह मुस्कराई, "और तुम अपने।" दृश्य काँप गया।

वह वेधशाला की संगमरमर की बेंच पर होश में आया। वृद्ध स्त्री नहीं थी। उसकी जगह एक चमकता हुआ लटकन पड़ा था—चंद्रकांत और ओब्सीडियन का संतुलन। साथ में लिखा था —"प्रस्थान धरती से नहीं, भ्रम से है। यात्रा तारों की नहीं, आत्मा की है।" ईशान ने उसे पकड़ लिया, जैसे मौन ज्ञान को पकड़ लिया हो।

अपने कक्ष में लौटकर उसने गगन की आवाज़ सुनी, "भाई, तू सच में चाँद पर है! हमें मत भूलना।" ईशान हँसा, "तू मेरी सबसे मूर्ख पर सबसे ज़रूरी ज़मीन से जुड़ी डोर है।" गगन बोला, "विनोद कह रहा था तू ध्यान करते-करते ब्लैकहोल में चला जाएगा।" ईशान हँस पड़ा, "शायद जाऊँ और ऐसे जवाब लेकर लौटूँ जिनका किसी ने सवाल ही नहीं पूछा।"

रात को सोने से पहले उसने पुरानी डायरी खोली, वही जिसमें कभी मायरा ने चित्र बनाए थे। बोधि वृक्ष का एक सूखा पत्ता गिर पड़ा। उसने उसे अपनी नई किताब—**चेतना और दिव्य प्राणी**—के भीतर रख दिया। क्योंकि कुछ ज्ञान को साथ ले जाना ज़रूरी होता है—ग्रहों के पार, समय के पार, स्मृति के पार।

और इसी तरह ईशान की सबसे सच्ची यात्रा शुरू हुई—धरती से दूर जाने की नहीं, बल्कि अपनी आत्मा की आकाशगंगाओं में गहराई से उतरने की। क्योंकि हर प्रस्थान वास्तव में एक वापसी भी होता है—उस सत्य की ओर, जिसे हम हमेशा खोजते रहे होते हैं। चाँद ने उसे अपनी उजली खामोशी में थाम लिया, और ईशान मुस्कराया—इसलिए नहीं कि उसे सब उत्तर मिल गए थे, बल्कि इसलिए कि उसे अब पता था कि सच में कौन से प्रश्न मायने रखते हैं।

अध्याय 14: एक सांसारिक बंधन

सांझ का सुनहरा सूरज आलस से पहाड़ों की चोटियों को छू रहा था। ईशान शर्मा, अब पचास की उम्र पार कर चुके, अपनी पसंदीदा पहाड़ी ढलान पर बैठे थे। पास की चाय की दुकान से आती सीटी पुरानी यादों की तरह हवा में घुल रही थी और देवदार की खुशबू वातावरण को भर रही थी। उनकी गोद में एक घिसी हुई किताब रखी थी–*वह जो मेरी गुरु बनी*। वह उसे पढ़ नहीं रहे थे, बल्कि जी रहे थे। हर पन्ना स्याही और अक्षरों का नहीं, बल्कि उनके अपने जीवन की धड़कन था। जैसे ही हवा ने पन्ना पलटा, उनकी आँखें अगले अध्याय के शीर्षक पर ठहर गईं–**एक सांसारिक बंधन**। और कहानी फिर से उनके भीतर बहने लगी, जैसे कोई भूला हुआ स्वप्न अचानक जाग उठा हो।

सालों पहले, पाइन क्रेस्ट की ब्रह्मांडीय तीव्रता और मायरा की अनुपस्थिति से बने मौन घाव के बाद, ईशान भीतर से जल रहे थे। यह पीड़ा का जलना नहीं था, बल्कि ऐसी आंतरिक अग्नि थी जिसे कोई मंत्र, कोई ध्यान शांत नहीं कर पा रहा था। उनका मन, जो कभी स्थिर रहता था, अब मायरा की स्मृति से भरा था–उसकी हँसी, उसका मौन, वह प्रकाश जो वह कभी उनके भीतर बन गई थी। यह रोमांटिक लालसा नहीं थी, बल्कि एक गहरा और खतरनाक आध्यात्मिक दर्द था, जो मिटने का नाम नहीं लेता था।

परिवार चिंतित होने लगा। एक करीबी रिश्तेदार ने, उनकी चुपचाप गिरती हुई अवस्था देखकर, विवाह का सुझाव दिया। लड़की का नाम था वेदिका–संतुलित, समझदार और स्वतंत्र, दूर के रिश्ते में जुड़ी हुई। ईशान ने उसे कभी देखा भी नहीं था। और उस समय उनके भीतर जो आग जल रही थी, उसमें चुनाव करने की शक्ति ही नहीं बची थी। इसलिए उन्होंने बिना सोच-विचार के हाँ कर दी। न उत्साह था, न प्रेम की कोई कल्पना। यह फैसला प्रेम से नहीं, थकान से लिया गया था–जैसे जंगल की आग में कोई पानी खोज ले। यह प्रेम की ओर कदम नहीं था, बल्कि आत्मरक्षा का प्रयास था।

शादी बहुत सादगी से, बहुत जल्दी हो गई। वेदिका अपने सौम्य स्वभाव और शांत समझ के साथ ईशान के जीवन में आई। उसने किसी चमत्कार की अपेक्षा नहीं की थी, लेकिन जो ठंडापन उसे मिला, उसकी कल्पना भी नहीं की थी। महीनों तक ईशान अलग-थलग रहे। वह क्रूर नहीं थे, बस अनुपस्थित थे। वेदिका यह महसूस कर सकती थी कि वह उसे देख नहीं रहे थे, बल्कि उसके पार देख रहे थे। धीरे-धीरे यह दूरी नियंत्रण में बदल गई। अनजाने में। भीतर का दबाव ऐसा था कि ईशान उसे सिखाने लगे–कैसे रखना है, कैसे बोलना है, कैसे पूजा करनी है, मेहमानों के सामने कैसे बैठना है। वह हुक्म चलाना नहीं चाहते थे, लेकिन मायरा की छवि अभी भी उनके मन में जीवित थी, और बाकी सब कुछ उसके सामने फीका लगने लगा था।

वेदिका को लगने लगा कि वह किसी अदृश्य देवी से तुलना की जा रही है। ईशान ने कभी मायरा का नाम नहीं लिया, फिर भी उसका साया उनके बीच खड़ा था।

एक दिन, किसी छोटी सी बात पर हुई शांति भरी बहस के बाद, वेदिका ने अपना सामान उठाया और मायके चली गई। न रोई, न चिल्लाई—बस चली गई। उस शाम ईशान अकेले बैठे रहे। कमरा साफ था, शांत था, पर निर्जीव। तभी उन्हें समझ आया कि यह शांति, शांति नहीं थी—यह दंड था। उनकी नज़र चप्पलों पर पड़ी, अधूरी किताब पर, फ्रिज पर लगी आधी लिखी सूची पर। और भीतर कुछ टूट गया—शोर से नहीं, बल्कि सूखी ज़मीन के चुपचाप फटने की तरह। उन्हें एहसास हुआ कि उन्होंने एक सच्चे इंसान को दूर कर दिया, जो सिर्फ ईमानदारी लेकर आई थी। वेदिका एक सप्ताह तक मायके में रही, लेकिन अगले ही सप्ताह ईशान खुद वहाँ पहुँच गए। अब वह उसकी अनुपस्थिति सह नहीं पा रहे थे। झुके हुए मन और नम्र आत्मा के साथ उन्होंने कहा, "मैं गलत था। शब्दों में नहीं, भाव में। मैं खुद को दंड दे रहा था... और तुम उसमें फँस गई।" वेदिका ने उन्हें देखा—न क्रोध से, न प्रेम से, बल्कि अनिश्चय से। फिर भी उसकी आँखों में कुछ ऐसा था जिसने उसे वापस आने पर मजबूर कर दिया। डर से नहीं, आशा से।

उस मोड़ के बाद जीवन में धीरे-धीरे परिवर्तन आया। दूरी दीवार नहीं रही, पुल बन गई। सालों तक उन्होंने अपने पुराने प्रेमों की बात नहीं की। यह मौन समझौता था, डर से नहीं, बल्कि समय के इंतज़ार से। वे सम्मान और सहजता से जीने लगे, फिर भी उनके बीच कुछ अनकहा था, शांत पड़ा हुआ।

फिर एक दिन, बहुत बाद में, कुछ अनपेक्षित हुआ। ईशान ने एक और जागृति का अनुभव किया—इस बार तारों के नीचे अकेले नहीं, बल्कि वेदिका के माध्यम से। वह कोई बड़ा दृश्य नहीं था, बस उसका एक देखना, एक वाक्य, उसकी उपस्थिति। और उसी क्षण ईशान को लगा कि वेदिका के साथ उनका उद्देश्य पूरा हो गया है। यह जागरण पहले से भी गहरा था। अब उन्होंने यह मानना छोड़ दिया कि मायरा उनके लिए सबसे उपयुक्त थी। अब उन्हें विश्वास हो गया था कि वेदिका ही सही साथी थी, क्योंकि उसी के साथ उन्हें अंतिम बोध मिला। अब उन्हें समझ आ गया था कि उनका असली लक्ष्य जागरण था, बाकी सब गौण। और यही सबके जीवन का अंतिम लक्ष्य है, चाहे वे जानें या नहीं।

इस जागरण के बाद ही उन्होंने पहली बार अतीत को साझा किया। एक शाम छत पर बैठे, सुनहरे आकाश के नीचे, ईशान ने कहा, "मेरे जीवन में कोई थी... जिसने मेरे भीतर कुछ खोल दिया। मैं समझ नहीं पाया, पर उसने मुझे बदल दिया।" वेदिका मुस्कराई, "मेरे जीवन में भी कोई था... बहुत पहले। उसने भी मुझे गढ़ा।" उन्होंने प्रश्न नहीं किए, बस सुना। और उस सुनने में कुछ पिघल गया। जैसे वर्षों से जमी चुप्पी बहने लगी हो।

उसके बाद सब कुछ बदल गया। उन्होंने एक-दूसरे को मुक्त रहने दिया। सम्मान रहा, देखभाल रही, पर बंधन नहीं रहा। उनका प्रेम अब अलग था—कानूनी रूप से साथ, पर आत्मिक रूप से स्वतंत्र। उन्होंने पुराने मित्रों से फिर जुड़ना शुरू किया, लौटने के लिए नहीं, बल्कि अतीत को पूरी तरह छोड़ने के लिए। और तब एक सुंदर चमत्कार हुआ। उनका प्रेम और गहरा हुआ, पर बिना आसक्ति के। बिना निर्भरता के। वे साथ रहे, पर मुक्त रहे।

अब, जब संध्या की अंतिम रोशनी भी बुझने लगी, ईशान ने किताब बंद की और उसे सीने से लगा लिया। देवदार के वृक्ष ऊपर झूम रहे थे, जैसे पुराने साधु प्रार्थना कर रहे हों। उनके चेहरे पर गर्व नहीं था, केवल शांति थी। जो विवाह आवश्यकता से शुरू हुआ था, वह अब शर्तों से परे प्रेम बन चुका था। इसलिए नहीं कि उन्होंने पकड़ा, बल्कि इसलिए कि उन्होंने छोड़ दिया। और उसी छोड़ देने में उन्होंने ऐसा बंधन पाया, जिसे कोई आग जला नहीं सकती।

अध्याय 15: चंद्र पदस्थापन

सुबह की हल्की रोशनी खिड़की से होकर कमरे में फैल रही थी और लकड़ी के फर्श पर धीरे-धीरे उतरती जा रही थी, जब ईशान ने अपनी किताब *वह जो मेरी गुरु बनी* का पंद्रहवाँ अध्याय खोला। हिमाचल के उनके घर के बाहर बगीचा कोहरे से ढका शांत दिखाई दे रहा था। यह चुप्पी खाली नहीं थी, बल्कि ऐसी लग रही थी जैसे पेड़ भी ध्यान से सुन रहे हों। उनके हाथ पन्नों पर धीरे चल रहे थे और शब्द केवल पढ़े नहीं जा रहे थे, वे जैसे जीवित होकर उनके सामने खड़े हो गए थे। यह पढ़ना नहीं था, यह फिर से जीना था।

धरती पर वर्षों तक पशु चिकित्सक के रूप में सेवा करने के बाद, ईशान शर्मा, अब अपने चालीसवें दशक में एक शांत लेकिन भीतर से प्रकाशित व्यक्ति बन चुके थे, एक अकल्पनीय परिवर्तन के द्वार पर खड़े थे। इंटरप्लैनेटरी वेटरनरी एलायंस का आधिकारिक पत्र आया था—उन्हें चंद्रमा पर स्थित पशु अनुसंधान केंद्र में नियुक्त किया गया था। चंद्र कॉलोनी, जो कभी विज्ञान की कल्पना थी, अब सीख और प्रयोग का एक शांत आश्रम बन चुकी थी। ईशान ने एक पल भी नहीं सोचा। वेदिका उनके साथ थीं, और उनके बच्चे—बारह साल की दीया, जो तारों को देखने में खोई रहती थी, और पाँच साल का रूहान, शरारती और जिज्ञासु। वे सब अपने पारिवारिक अंतरिक्ष यान में बैठे, जो किसी रॉकेट जैसा नहीं, बल्कि सितारों के बीच एक लंबी सड़क यात्रा जैसा लग रहा था। यान धीरे-धीरे धरती के नीले घेरे से बाहर निकला और अंतरिक्ष की दूधिया शांति में प्रवेश कर गया। बच्चे खिलौनों को हवा में तैरते देख हँस रहे थे, बुलबुले जैसे पेय उनके चारों ओर घूम रहे थे। वेदिका चुप थीं, उनकी आँखों में बदलती रोशनी नाच रही थी। ईशान उन्हें देख रहे थे, उनके पीछे फैले ब्रह्मांड के सामने उनकी आकृति शांत और स्थिर थी। बहुत कुछ बीत चुका था, और अब उनके बीच बिना शब्दों के एक नई समझ खिलने लगी थी।

यह यात्रा किसी स्थानांतरण जैसी नहीं, बल्कि किसी दिव्य अवकाश जैसी लग रही थी। वे तैरते हुए रेस्टोरेंटों में रुके, जो कमल के आकार के थे, जहाँ खाना प्लेटों के चारों ओर घूमता रहता था। अंतरिक्ष में बने पार्कों में बच्चे उछलते-कूदते रहे। एक गुंबद में दीया शून्य गुरुत्व में नाची, और रूहान हँसते हुए अंतरिक्ष के बुलबुले पकड़ता रहा। वेदिका तस्वीरें लेती रहीं, और ईशान पहली बार अपने मन को परिवार की हँसी में पूरी तरह डूबने दिया। धरती पीछे छूटती गई, छोटी होती गई, और तभी चंद्रमा सामने नहीं, बल्कि ईशान के भीतर उग आया।

जब वे कोपर्निकस क्रेटर के भीतर बसे चंद्र आवास की ओर उतरे, ईशान को एक अजीब-सा अनुभव हुआ—एक उपस्थिति। उनके वंश का गुरु। अब मायरा नहीं। उसका रूप, जो कभी इतना तेज था, अब धीरे-धीरे सुबह की धुंध की तरह विलीन हो चुका था। धरती छोड़ने के बाद मायरा की स्मृति हर दिन हल्की होती गई थी, और अब इस पितृलोक जैसे चंद्र क्षेत्र में,

उनके रक्त की गुरु-परंपरा जाग उठी थी। एक रात वेदिका से उन्होंने कहा, "मुझे नहीं पता क्यों, लेकिन लगता है जैसे वह यहीं बैठते थे... जैसे चाँद ने उन्हें गोद में लिया हो।" वेदिका मुस्कराईं और बोलीं, "तो शायद तुम यहाँ इसलिए आए हो कि वहीं बैठ सको और वही देख सको जो उन्होंने देखा था।"

वे अपने अतीत को साथ नहीं लाए थे। वह अध्याय धरती पर ही शांत होकर बंद हो चुका था। अब वे एक-दूसरे को पकड़ने की कोशिश नहीं कर रहे थे। वे बस थे। चंद्र कॉलोनी वैसी नहीं थी जैसी ईशान ने सोची थी—न ठंडी, न निर्जीव। वह मौन में जीवित थी। जैव-गुंबदों में नीली-हरी वनस्पतियाँ थीं, और नरम गुरुत्व वाले बागों में विभिन्न ग्रहों के जानवरों का इलाज और अध्ययन होता था। ईशान इंटरप्लैनेटरी वेटरनरी लैब में काम करने लगे, जहाँ उनकी मार्गदर्शक डॉ. लैशा थीं—शांत, सुनने वाली, बिना दबाव के उपस्थिति रखने वाली, बिल्कुल अंजलि की याद दिलाने वाली। अंतरिक्ष में एक अजीब स्वतंत्रता थी। यहाँ भावनात्मक बोझ साथ नहीं चल पाता था, शून्य उसे जला देता था।

गगन ने एक दिन संदेश भेजा, "पाइन क्रेस्ट से पेट मून स्कूल! गर्व है, अंतरिक्ष साधु!" मि. दत्त का संदेश भी आया—"तुम हमेशा अलग चलते थे, ईशान। अच्छा लगा यह देखकर कि वह रास्ता कहाँ पहुँचा।" विनोद ने चंद्र मिट्टी पर शोध का पूरा डेटा भेज दिया। गोविंद सेवानिवृत्त हो चुके थे। रंजना अब दादी बन चुकी थीं और हँसते हुए बोलीं, "तू हमेशा तारों का था, ईशु।" फिर भी, इन सब आवाज़ों के बीच चाँद ने ईशान को कुछ दिया—ऐसी शांति जिसमें अकेलापन नहीं था।

एक शाम, जब दीया खिड़की पर नक्षत्र बना रही थी और रूहान गुरुत्वहीन काउबॉय बनकर खेल रहा था, ईशान को पाइन क्रेस्ट स्कूल का लड़का याद आया—जो तारों को ज़्यादा देर तक देखता था, जिसने पहली बार मायरा का नाम अपने भीतर घंटी की तरह सुना था। उन्होंने सोचा, "मायरा अग्नि थी, लेकिन दादा गुरु उसकी बाती थे।" यह समझ बिजली की तरह नहीं, चाँदनी की तरह आई—शांत, ठंडी, निश्चित।

कुछ हफ्तों बाद, पारदर्शी चंद्र मंदिर में ध्यान करते हुए ईशान को दर्शन हुआ। उनके दादा गुरु एक पत्थर पर बैठे थे, प्रकाश के मैदान को देखते हुए। कोई शब्द नहीं, बस आशीर्वाद में उठा हुआ हाथ। वही सब कुछ था। और वही पर्याप्त। उनकी आँखों से आँसू बह निकले—न दुख के, न खुशी के, बस मुक्त होने के।

वेदिका ने उन्हें गलियारे में देखा, कुछ नहीं पूछा, बस हाथ थाम लिया। "आज मैं खाना बनाऊँगी," उन्होंने कहा, "चाहे चाँद के आलू ही क्यों न हों।" ईशान हँस पड़े, "बस पृथ्वी का मसाला हो, तो मैं बच जाऊँगा।" चंद्र जीवन परिपूर्ण नहीं था, पर पूरी तरह उनका था। वे गुरुत्व के बदलावों के अभ्यस्त हो गए, संदेशों की देरी स्वीकार कर ली। दीया ने एक

मार्शियन लड़की न्यरा से दोस्ती कर ली। रूहान ने एक रूप बदलने वाला पालतू अपना लिया। वेदिका ने योग सिखाना शुरू किया, और उनकी कक्षाएँ हँसी और सहज ज्ञान से भर गईं। ईशान काम करते रहे, जानवरों को ठीक करते रहे, उन्हें सुनते रहे। कभी मंत्र गुनगुनाते, कभी बस उनके साथ चुपचाप बैठ जाते। और जानवर समझ जाते।

धीरे-धीरे, बिना किसी घोषणा के, उनका आत्मबोध फैलने लगा। अब वह खोजी नहीं थे जिन्हें संदेह जलाने के लिए आग चाहिए थी। वह स्वयं आग बन चुके थे। वह स्वयं चंद्रमा बन चुके थे।

जब ईशान ने अध्याय 15 का आख़िरी पन्ना पलटा, उनके बगीचे पर छाए बादल हट गए। ठंडी हवा चली, पत्ते सरसराए, पक्षी चुप हो गए—जैसे सुन रहे हों। उन्होंने किताब बंद की, उसे गोद में रखा। हवा में धरती और देवदार की खुशबू थी। कहीं आकाश में चंद्रमा प्रतीक्षा कर रहा था।

अध्याय 16: पूर्वजों का लोक

ईशान हिमाचल की अपनी धरती पर, एक साफ़ बहती पहाड़ी धारा के किनारे पत्थर पर बैठा हुआ, *वह जो मेरी गुरु बनी* का सोलहवाँ अध्याय पढ़ रहा था। देवदार और जंगली फूलों की खुशबू हवा में घुली हुई थी और पहाड़ों की शांति पन्नों पर लिखे शब्दों को जीवित बना रही थी। उसने अध्याय का शीर्षक पढ़ा—**पूर्वजों का लोक**—और उसके हृदय में स्मृतियों की एक कोमल लहर उठी। सामने बहता पानी उसे चंद्रमा की धूसर घाटियों जैसा लग रहा था, और जैसे ही उसने पढ़ना शुरू किया, वर्तमान और अतीत की सीमा अपने आप मिट गई।

चंद्रमा पर लौटना किसी शहर या मोहल्ले में वापस जाने जैसा नहीं था, बल्कि किसी ऐसे सपने में फिर से प्रवेश करना था, जिसे कभी देख कर वह जाग चुका था। ईशान शर्मा, अब एक अनुभवी पशु चिकित्सक, जिनके चेहरे पर समय ने कोमल झुर्रियाँ बुन दी थीं, फिर से पितृलोक की धूसर धरती पर खड़े थे। वहाँ छायाएँ धीरे चलती थीं और मौन में बीते युगों के गीत बसे थे। चंद्रमा बदल गया था या शायद वह स्वयं बदल गए थे। पहले उनके शरीर में हल्कापन था, मन में बेचैनी थी, और हृदय में एक अनाम ज्वाला धधकती रहती थी—मायरा। उस समय मायरा की छवि चंद्रमा की भूमि पर मंत्र की तरह अंकित थी। वह स्मृति नहीं, साधना बन चुकी थी। उसकी दृष्टि, उसकी चुप्पियाँ, उसके बिना कहे गए वाक्य—सब चंद्र शांति में नृत्य करते रहते थे।

पर उसी गहराई में एक और उपस्थिति उभरी थी—उनके दादा गुरु। जब भी मायरा की छवि तीव्र होती, गुरु का रूप भी सामने आ जाता—केसरिया वस्त्रों में, शांत, आँखों में सहस्र वर्षों का ज्ञान। चंद्रमा तो चंद्रलोक था, पितरों का क्षेत्र, जहाँ वंश, विरासत और मुक्ति पर ध्यान करना स्वाभाविक हो जाता है। ईशान को हमेशा लगता था कि इस भूमि में हज़ारों ऋषियों और पूर्वजों की चेतना बह रही है।

अब, बीस वर्ष बाद, मायरा की स्मृति एक पुराने पत्र पर लगी हल्की सुगंध जैसी हो गई थी। वेदिका, दीया और रूहान ने उस स्थान को भर दिया था जहाँ कभी केवल एक नाम गूँजता था। फिर भी, जब वह दोबारा चंद्र धरती पर उतरे, मायरा की अनुभूति लौटी—स्त्री के रूप में नहीं, स्मृति के रूप में भी नहीं, बल्कि आत्मा की एक झलक के रूप में। वह अलग नहीं रही थी; वह चेतना में घुल चुकी थी। उसने कभी लिखा था, "अजीब है, जो तूफ़ान उठाए, वही अंत में शांति बन जाता है।"

उन दिनों वह उन दृश्यों से जूझते थे। उन्हें शांत करने के लिए वे अपने चचेरे भाई गोविंद पर ध्यान करते थे, जो कभी उनके घर रहा था—नैतिक बल और जिज्ञासा का प्रतीक। गोविंद की स्थिरता और मायरा की कोमलता का मेल एक अद्भुत संतुलन बनाता था। मायरा की दृष्टि भविष्यवाणी बन जाती थी, उसकी चुप्पी ब्रह्मांड बोलने लगता था।

पाइन क्रेस्ट के दिन भी चंद्रमा पर लौट आते थे। कभी सपने में मि. दत्त दिखाई देते, हाथ में आकाशीय ब्लैकबोर्ड लिए, जिन पर लिखे सूत्र उपनिषदों में बदल जाते। विनोद, अब डार्क मैटर का वैज्ञानिक, मज़ाक करता था, "ईशान, तुझे यान की ज़रूरत नहीं, तू खुद एक यान है।" गगन की आवाज़ गलियारों में गूँजती, रंजना की हिदायतें संदेशों में आतीं, और ईशान खिड़की से बाहर देखता हुआ मायरा की अनुपस्थिति को महसूस करता रहता।

पर यह वापसी केवल अध्ययन के लिए नहीं थी, यह आध्यात्मिक थी। चंद्रमा अब आधिकारिक रूप से मनो-आध्यात्मिक आवास बन चुका था, और ईशान का काम पशुओं के साथ-साथ वहाँ बसने वालों के मन पर पूर्वजों की ऊर्जा के प्रभाव को समझना था। वह पशु चिकित्सक भी थे और साधक भी।

एक शाम, एक चंद्र बाज़ की जाँच करते हुए, उन्होंने क्षितिज पर कुछ आकृतियाँ देखीं—न मनुष्य, न प्रेत, न ही किसी ग्रह की जाति। वे ध्यान की ऊर्जा से पोषण पाने वाले प्राणी थे, तारे की रोशनी में ओस जैसे चमकते हुए। जब ईशान ध्यान में बैठते, गुरु और मायरा के संयुक्त रूप पर मन टिकाते, तो उन्हें लगता जैसे विचार धूप बनकर उठते हैं और वे प्राणी नृत्य करते हैं। बदले में वे ईशान को और गहरी शांति देते। यह सब उन्होंने लॉग में लिखा, पर पृथ्वी को नहीं भेजा। कुछ सत्य मौन में ही जड़ें जमाते हैं।

अब इन पन्नों को पढ़ते हुए ईशान मुस्कराए। उन्होंने कभी खुद से पूछा था, "मैंने मायरा को प्रेम प्रस्ताव क्यों नहीं दिया, जबकि भीतर जल रहा था?" उत्तर धीरे-धीरे वर्षों में खुला। बहुत दीवारें थीं—सामाजिक, पारिवारिक, और सबसे बड़ी—उन दोनों के बीच की चुप्पी। बिना एक शब्द बोले वर्षों बीत गए थे। उन्होंने सोचा था उस चुप्पी को तोड़ने का, पर वह प्रयास स्वयं प्रेम से भारी लगने लगा। इसलिए उन्होंने व्यवस्थित विवाह चुना—सहजता के कारण नहीं, बल्कि संभावना के कारण। उन्होंने लिखा था, "आने वाले विवाह की खुशी को असंभव प्रेम के शोक से क्यों कम करूँ?"

पुराणों की प्रेम कथाएँ उन्हें रास्ता दिखाती थीं। राधा ने कृष्ण से विवाह नहीं किया, शिव ने पार्वती को तप के बाद पाया। ये कथाएँ केवल कहानियाँ नहीं थीं, वे ऊर्जा के नक्शे थीं। प्रेम की एक चिंगारी भी जागरण का मार्ग बन सकती थी—यही उनका रहस्य था।

एक रात की बात उन्हें याद आई। ध्यान की तीव्रता अचानक बढ़ गई थी। मायरा देवी के रूप में प्रकट हुई—अग्नि से घिरी हुई—और फिर वह गुरु में विलीन हो गई। उसकी आँखें गुरु की आँखें बन गईं। ईशान रो पड़े—आश्चर्य से, श्रद्धा से। तब उन्हें समझ आया कि मायरा बाहर कभी थी ही नहीं। वह भीतर ही थी।

अध्याय समाप्त होने को था। ईशान ने पन्ने से नज़र उठाई। सूर्य पहाड़ों के पीछे ढल रहा था, पाइन के वृक्ष सुनहरी रोशनी में नहा रहे थे। पक्षी अपने घोंसलों को लौट रहे थे। दूर कहीं गाय की घंटी बजी। बच्चों की हँसी हवा में तैर गई। उन्होंने किताब घुटनों पर रखी और आकाश की ओर देखा। चंद्रमा की हल्की मुस्कान उग रही थी। उन्होंने धीरे कहा, "पितृलोक केवल चंद्रमा पर नहीं है, वह वहाँ है जहाँ आत्मा अपनी जड़ों को छूकर नमन करती है।"

धारा बहती रही, मानो प्रार्थना दोहरा रही हो—जय गुरु देव, जय मायरा देव, जय वह आत्मा जो कभी अलग थी ही नहीं। ईशान ने अध्याय बंद किया—केवल किताब में नहीं, अपने हृदय में भी, जो कभी टूटा नहीं था, केवल बार-बार नए आकाशों के लिए खुलता रहा। वे मुस्कराए और धीरे बोले, "मैं आज भी याद करता हूँ, जब मैंने चंद्रमा छोड़ने का निर्णय लिया था। वहाँ की ठंडी, सीमित सुविधाएँ मेरे बढ़ते शरीर के लिए पर्याप्त नहीं थीं। मुझे मिट्टी की गंध, धूप की गर्मी, धरती की भीड़ की याद आने लगी। वही भूख मुझे वापस लाई। मैंने समय से पहले सेवानिवृत्ति ली और लौट आया, क्योंकि अंत में, चाहे जितना दूर जाओ... घर तो घर ही होता है, और धरती, धरती ही रहती है।"

अध्याय 17: तंत्र और पुनर्संयोग

ईशान ने *वह जो मेरी गुरु बनी* के घिसे हुए लेकिन चमकते पन्नों को धीरे-धीरे पलटते हुए सत्रहवाँ अध्याय खोला। बरामदे के बाहर पुराने हिमालयी देवदार से छनकर आती सुनहरी धूप छत पर बदलती आकृतियाँ बना रही थी। हवा में जंगली चमेली की हल्की सुगंध थी और दूर किसी गाँव से मंदिर की घंटियों की ध्वनि आ रही थी। बावन वर्ष की उम्र में वह नंगे पाँव बैठा था, शॉल एक कंधे से थोड़ी खिसकी हुई, और अध्याय उसे स्मृति की तरह नहीं, बल्कि एक पवित्र वर्तमान की तरह महसूस हो रहा था—जीवित, धड़कता हुआ, खुलता हुआ।

जैसे ही उसने पन्ना पलटा, चंद्रमा की शांत घाटियों की स्मृति धीरे-धीरे घुल गई और उसकी जगह एक नया ताल आया—अधिक गर्म, अधिक देहगत, अधिक निकट।

पितृलोक स्टेशन पर लंबे चंद्र प्रवास के बाद ईशान पृथ्वी पर लौटा तो वह वही व्यक्ति नहीं था जो कभी गया था। चंद्रमा ने उसे भीतर से तराश दिया था, उसकी खुरदुरी धारों को घिस दिया था, उसकी लालसाओं को मुलायम बना दिया था। पर इस मुलायमपन ने उसे अधिक संवेदनशील भी बना दिया था। वेदिका के साथ पुनर्मिलन में गर्माहट तो थी, पर उसके नीचे एक मौन धारा भी बह रही थी—कुछ अनकहा, लगभग छाया जैसा।

रात को वह उसके पास लेटा रहता, पास के कमरे से दीया की शांत साँसें सुनता, फिर भी उसे लगता कि उसका कोई हिस्सा अभी भी चंद्र गुंबद के नीचे तारों को देख रहा है। और वेदिका, हमेशा की तरह समझदार और सजग, यह सब देख रही थी।

एक शाम, जब वे दोनों मिलकर हलवा बना रहे थे—ईशान आलस में चलनी चला रहा था और वेदिका इलायची की मात्रा ठीक कर रही थी—उसने बिना देखे कहा,
"ईशान, कभी-कभी किसी के पास लौटने का रास्ता स्मृति से नहीं, ऊर्जा से होकर जाता है।"

ईशान चौंका, फिर हँस पड़ा। "तो क्या हम मिठाई के साथ तंत्र की व्याख्या करने लगे हैं?"

वह मुस्कराई, पर कुछ बोली नहीं।

दोनों ही गहरे तांत्रिक संस्कारों में पले थे—वेदिका के घर में ललिता मार्ग की परंपरा थी, और ईशान को अपने दादा और गोविंद जैसे चचेरे भाइयों के माध्यम से तंत्र का स्पर्श मिला था। पर उन्होंने वही अभ्यास किया था जो समाज को स्वीकार्य था—सात्त्विक, ध्यानमय, अनुशासित। वाममार्ग की झलक बस किताबों और फुसफुसाहटों में थी, जीवन में नहीं।
लेकिन ईशान की वापसी—उसकी चंद्र शांति, उसकी आँखों में ठहरी पुरानी ऋचाएँ—ने वेदिका में एक पवित्र शरारत जगा दी।

वह शाम को पहले दीये जलाने लगी। पूजा थाली में उसने धीरे-धीरे योनिरूप दीप जोड़ दिए। अगरबत्तियों की खुशबू बदल गई—अब वह अधिक मिट्टी जैसी, गहरी और भारी थी। एक दिन उसने मंत्रों को बदल दिया—अब धीमे, लयबद्ध त्रिपुरसुंदरी के स्वर बजने लगे, जिनमें प्राचीन वेदिक ध्वनियाँ घुली हुई थीं।

घर की ऊर्जा बदलने लगी। ईशान ने सब देखा, पर कुछ कहा नहीं। वह केवल साक्षी बना रहा।
एक गोधूलि बेला में वेदिका ने पूछा,
"क्या तुम मेरे साथ ध्यान करोगे? जैसे पहली बार किया था?"

उसने सिर हिला दिया। पर इस बार सब कुछ अलग था।

कमरे में हल्की लाल रोशनी थी—सजावट से नहीं, बल्कि दीयों और लाल कपड़े से ढँके एक दीप से। वेदिका अर्धपद्मासन में उसके सामने बैठी थी, रीढ़ सीधी, आँखें आधी बंद, जैसे किसी मंदिर का स्तंभ। ईशान भी वैसे ही बैठ गया, पर उसे नहीं पता था कि आगे क्या होगा। कोई निर्देश नहीं दिया गया।

मौन गहरा हो गया—जानबूझकर, सघन।
फिर वेदिका ने साँस लेना शुरू किया—बिना आवाज़, बिना ज़ोर के, लयबद्ध तरंगों में, जैसे उनके बीच के अंतराल को हिला रही हो।
धीरे-धीरे ईशान भी उसी लय में आ गया। वर्षों बाद पहली बार वह अकेले नहीं साँस ले रहा था।
उनकी साँसें मिलीं, जुड़ीं, बहने लगीं। उनके बीच की दूरी मिट गई। ईशान ने अपने सारे पुराने रूप—चंद्र यात्री, भटकता विद्यार्थी, मौन प्रेमी—सबको पिघलते महसूस किया, और वह केवल एक पुरुष रह गया जो एक स्त्री के सामने बैठा था।

वेदिका ने आँखें खोलीं और अपना हाथ उसके हृदय के पास रखा—छूते नहीं, बस पास।
"तुम दूर नहीं हो," उसने कहा, "बस कहीं और चले गए हो।"

ईशान की आँखें भर आईं। "मुझे लगा था रास्ता खो गया है।"

वह मुस्कराई। "नहीं। तुमने बस दस्तक देना बंद कर दिया था।"

इसके बाद के दिन प्रेम की पुनःखोज बन गए—रोमांस के रूप में नहीं, बल्कि पुनर्संयोजन के रूप में। तंत्र कोई क्रिया नहीं थी, वह घर की उपस्थिति बन गया। कोई निर्धारित अनुष्ठान नहीं, बस स्वाभाविक ऊर्जा का आदान-प्रदान—एक स्पर्श, एक दृष्टि, एक साझा मौन जो धीरे-धीरे स्थिरता बन जाता था।

एक सुबह, जब दोनों खिड़की की ओर मुख करके पद्मासन में बैठे थे और देवदारों के बीच से सूरज निकल रहा था, ईशान ने कहा,
“लूनर यूनिवर्सिटी में ध्यान करते समय मैं मायरा को बहुत स्पष्ट देखता था। चंद्रमा ने उसे देवी बना दिया था, और मेरे गुरु उसके साथ प्रकट होते थे—जैसे इच्छा और दिव्यता एक साथ उभर रही हों।”

वेदिका ने आँखें बंद रखीं।
वह बोला, “पर वह कभी सिर्फ स्त्री नहीं थी। वह... सार थी। रूप से परे। शादी के बाद वह सूर्योदय की तरह लुप्त हो गई, पर मैंने उसे कभी नकारा नहीं।”

वेदिका ने आँखें खोलीं। “तुम्हें उसे मिटाने की ज़रूरत नहीं है। हम स्त्रियाँ उन बातों को भी जगह दे सकती हैं जिन्हें मन मिटाना चाहता है। वह तुम्हारी पवित्र अग्नि का हिस्सा है। और शायद... उसी ने तुम्हें मेरे और पास लाया।”

ईशान ने उसका हाथ पकड़ लिया। “इसलिए मैंने कभी किसी से उसका ज़िक्र नहीं किया। न रंजना से, न गगन से, न ही मि. दत्त से।”

वेदिका ने हँसते हुए भौंह उठाई। “विनोद से भी नहीं?”

“विनोद तो इसे गणित का सिद्धांत बना देता,” ईशान हँसा।

तांत्रिक पुनर्संयोग उन्हें और गहराई में ले गया—एक-दूसरे में ही नहीं, स्वयं में भी। एक दिन वेदिका ने अपने कुल की कथा सुनाई,
“हमारे यहाँ माना जाता है कि सच्चा तंत्र ईश्वर के सामने पारदर्शी हो जाना है—न इच्छा को प्रक्षेपित करना, न दबाना, बल्कि इतना शुद्ध होना कि इच्छा भी प्रार्थना बन जाए।”

“यह मायरा जैसी बात है,” ईशान ने कहा।

“या तुम्हारी,” वेदिका ने उत्तर दिया।

एक शाम विशेष रूप से यादगार रही। बाहर बारिश लगातार गिर रही थी। उन्होंने हल्का ध्यान किया, फिर वेदिका केसर वाला दूध लाई। वे चुपचाप पी रहे थे कि उसने कहा,
“तंत्र शरीर से ऊपर उठने की कला नहीं है, ईशान। शरीर को भी दिव्य बनाने की कला है।”

ईशान ने सिर हिलाया। “चंद्रमा पर मैं अलग-थलग था। धरती पर मैं स्थिर हूँ। लेकिन तुम्हारे साथ... मैं फिर से जुड़ गया हूँ।” फिर उसने धीरे जोड़ा, “तंत्र वैसे ही अद्भुत है, पर इसे ऊँचाई देती है पितरों की सूक्ष्म उपस्थिति, जो यहीं पितृलोक में रहते हैं।”

वह उसके पास झुक गई, माथा उसके माथे से लगा। “यही तो मार्ग है—दुनिया से भागना नहीं, बल्कि उसे भीतर से प्रकाशमान करना।”

दिन एक नई लय में बहने लगे—व्यावहारिक, पवित्र, सरल, शांत। कभी ईशान दाल ज़्यादा बना देता, कभी वेदिका अगरबत्ती जला देती। सब कुछ लीला का हिस्सा था। उनका तंत्र कोई बड़ा अनुष्ठान नहीं था—वह दो लोगों का बार-बार मिलना था, बिना अतीत, बिना भविष्य, केवल वर्तमान में।

और जब दीया ने एक दिन मासूमियत से पूछा, “पापा, आप दोनों आजकल इतना मुस्कुराते क्यों रहते हो?” तो ईशान ने उसका माथा चूमकर कहा, “क्योंकि प्रेम के कई अध्याय होते हैं, और हमने अभी एक नया खोला है।”

ईशान पढ़ते-पढ़ते रुक गया।
अब हवा ठंडी थी। घंटियाँ शांत हो चुकी थीं। केवल पक्षियों का स्वर बचा था, जो आकाश को अदृश्य धागों से सी रहा था। देवदार की छायाएँ छत पर और लंबी हो गई थीं। एक हल्का बादल सूरज के सामने से गुज़रा और सुनहरी रोशनी फैल गई।

उसने किताब कुछ पल के लिए बंद की और हवा से कहा,
“धन्यवाद, वेदिका। तुम मुझे वापस ले आई।”

अगला अध्याय धैर्य से प्रतीक्षा कर रहा था।
पर अभी वह वहीं बैठा रहा—स्मृति गर्म, क्षण पवित्र।

अध्याय 18: गुरु की वापसी

बावन वर्ष की उम्र में ईशान शर्मा ऊनी शॉल ओढ़े बरामदे में बैठा था। ढलती दोपहर की धूप सुनहरी धारियों में उसके लकड़ी के घर पर फैल रही थी। पहाड़ियों की गोद में बसे उस घर से सीढ़ीनुमा देवदार और धीरे-धीरे बहते बादल दिखाई देते थे। जल्दी सेवानिवृत्ति लेने के बाद उसने यहीं अपने शेष जीवन के शांत वर्षों को बिताने का निर्णय लिया था—मौन के पास, और स्वयं के और भी पास। पास ही तुलसी की चाय से भरा एक कप भाप छोड़ रहा था। उसने अपनी प्रिय पुस्तक फिर से खोली—वही, जिसे उसने वर्षों पहले लिखा था: *वह जो मेरी गुरु बनी*। अभ्यास में सधे हाथों से वह पन्ने पलटता गया और अध्याय 18 पर आकर रुका—गुरु की वापसी। जैसे ही उसकी दृष्टि शीर्षक पर ठहरी, बाहरी संसार धुंधला होने लगा। समय भीतर की ओर मुड़ गया। यह अध्याय पढ़ा नहीं जा रहा था—यह जिया जा रहा था। हर स्मृति इतनी जीवंत हो उठी जैसे वर्तमान ने अतीत से हाथ मिला लिया हो।

तंत्र से भरे पुनर्संयोग के उस पिछले चक्र के बाद, ईशान खुद को बचपन, किशोरावस्था के स्वप्नों और पूर्वजों की गर्माहट के भूले हुए धागों को फिर से जोड़ता हुआ महसूस करने लगा। परिवार के साथ अपनी नीली धातुई स्पेस कार में पृथ्वी लौटते हुए उसे अचानक चंद्र अवकाश मिला—कुछ विवाह निमंत्रण के कारण, पर अधिक इसलिए कि आत्मा की धड़कनें वापसी के लिए अक्सर अजीब समय चुनती हैं। हिमाचल में गोविंद के पैतृक घर पर हुआ मिलन किसी चमत्कार से कम नहीं था। देवदारों की खुशबू, ठंडी हवा और विवाह की चहल-पहल—सब कुछ हँसी से भरी किसी जीवंत तस्वीर की तरह लग रहा था। आंगन में लालटेनें जेलीफ़िश जैसी चमक रही थीं, पत्थर की दीवारों से हँसी टकराकर लौट रही थी, जिन दीवारों ने पाँच पीढ़ियों को आते-जाते देखा था। भांगड़ा की ताल और मौसियों की छेड़छाड़ के बीच ईशान ने एक बात गहराई से महसूस की—मायरा वहाँ नहीं थी। वह उत्सव का हिस्सा नहीं थी, फिर भी उसकी उपस्थिति किसी भूली हुई खुशबू की तरह हवा में घुली थी। शायद यही उस शाम के रहस्यमय मौन का कारण था।

वहीं ईशान की मुलाकात रंजना से हुई, जो कुछ पुराने पाइन क्रेस्ट स्कूल के साथियों के साथ आई थी। उन्हें देखकर उसके भीतर एक पुरानी खुशी उछल पड़ी। विनोद हँसते हुए बोला, "याद है, जब हमने मि. दत्त को यकीन दिला दिया था कि लैब का कंकाल पलक झपका रहा है?" अनजली ने तुरंत जोड़ा, "और गगन ने प्रिंसिपल मैडम की सफेद साड़ी पर नीली स्याही गिरा दी थी—गलती से, बिल्कुल गलती से।" वे सब इतनी ज़ोर से हँसे कि आँखों में पानी आ गया। रंजना मुस्कराते हुए बोली, "कौन जानता था कि हमारी राहें फिर ऐसे मिलेंगी?"

बाद में ईशान और रंजना बाग़ में टहलने निकले, जहाँ ज़मीन पर कच्चे सेब बिखरे थे। रंजना ने पूछा, "गोविंद की शरारतें याद हैं?" ईशान हँसा, "कैसे भूल सकता हूँ? वह तो जैसे कृष्ण का

अवतार था—पूरा शैतान।" वे किस्से दोहराने लगे—प्रसाद की थाली से लड्डू चुराकर कुत्ते पर दोष डाल देना, अलार्म घड़ियाँ अलमारियों में छिपा देना, हवन में रंग मिलाकर 'इंद्रधनुषी आशीर्वाद' बना देना। दोनों हँसते-हँसते थक गए। रंजना पेट पकड़कर बोली, "इतनी हँसी में साँस भूल जाती है।" ईशान बोला, "गोविंद की शरारतों में भी यही होता था।"

शाम के शोर के बीच ईशान नाशपाती के पेड़ के नीचे बैठ गया। अचानक एक गहरी शांति उतर आई। मायरा की अनुपस्थिति तीव्र थी, पर शांत भी। धरती स्मृतियों से गुनगुना रही थी। तभी मंदिर के पुराने दीपक को झिलमिलाते देख उसके भीतर ऊर्जा की एक लहर उठी। वह रीढ़ से उठकर ऊपर बहने लगी, जैसे प्रकाश का सर्प। पर इस बार वह उग्र नहीं थी, बल्कि परिचित, कोमल और प्रेम से भरी थी। अचानक उसके दादाजी—मूल गुरु—की छवि अत्यंत स्पष्ट हो उठी। भीतर की आवाज़ बोली, "पुराण पढ़ना उन्हें देखने से अधिक फलदायी है, क्योंकि पढ़ते समय मन अपनी ही कल्पनाओं से चित्र बनाता है और वही कल्पनाएँ संस्कारों को धीरे-धीरे घोल देती हैं। पर स्क्रीन पर देखना दूसरों की कल्पना में कैद होना है।" ईशान को याद आया, कैसे दादाजी नीम के पेड़ के नीचे बैठकर भागवत पढ़ते थे और बादलों को देखकर मुस्कराते थे।

यह दूसरी बार था जब ऊर्जा पूर्ण चक्र में लौटी थी—आज्ञा तक नहीं, हृदय में खिलते हुए। वह किसी खोज में नहीं था; वह घर लौट आया था। उसने मन ही मन हाथ जोड़ लिए। "धन्यवाद, दादाजी।" कोई गड़गड़ाहट नहीं हुई, कोई चमत्कार नहीं—बस एक मिठास, जैसे मौन में बाँसुरी बज उठी हो।

थोड़ी दूर वेदिका कॉफी लेकर आई। उसके पास बैठते हुए बोली, "तुम कहीं और लग रहे हो।" ईशान मुस्कराया, "मैं वहीं हूँ जहाँ होना चाहिए।" वह बोली, "यही तो मैं चाहती थी।" कुछ क्षण बाद उसने पूछा, "तुम्हें यहाँ किसने पहुँचाया?" ईशान ने कहा, "एक पुरानी स्मृति ने।" वेदिका ने कहा, "तो जागृति कुछ नया बनना नहीं, बल्कि कुछ पुराना याद करना है?" ईशान ने सिर हिलाया, "हाँ।"

वेदिका रसोई की ओर चली गई। उसके जाते ही गगन और रंजना आ बैठे। तीनों छत पर बैठकर पहाड़ियों पर उतरती रात देखते रहे। रंजना बोली, "प्रेम कभी रूप में बँधता नहीं, है न?" ईशान ने कहा, "प्रेम बहता है, रूप बदलता है।" गगन ने पूछा, "जैसे गोविंद से मायरा, और फिर कृष्ण तक?" ईशान मुस्कराया, "हाँ, प्रेम कभी छोड़ता नहीं—वह बस नया आकार लेता है।"

रात को चाँद निकल आया, ढोलों की आवाज़ दूर से आ रही थी। ईशान अकेला छत पर खड़ा रहा। गुरु व्यक्ति बनकर नहीं लौटे थे, बल्कि उपस्थिति बनकर। उसने पुस्तक बंद की, और

धीमे से कहा, “मैं अब भी वही लड़का हूँ—बस थोड़ा और पूर्ण।” और दिन शांत भाव से रात में ढल गया, जैसे ईशान उम्र में नहीं, बल्कि नयेपन में आगे बढ़ गया हो।

अध्याय 19: स्वप्न, मायरा और रहस्य

जब ईशान *वह जो मेरी गुरु बनी* के उन्नीसवें अध्याय तक पहुँचा, तब दोपहर की धूप धीरे-धीरे देवदार से ढकी हिमालयी पहाड़ियों के पीछे ढलने लगी थी। पहाड़ों के ऊपर बादलों की एक हल्की चादर तैर रही थी, जो रोशनी को पुरानी याद की तरह फैला रही थी—न बहुत तेज़, न बहुत फीकी। वह खुली खिड़की के पास फर्श पर पालथी मारकर बैठा था। हल्की हवा में चीड़ की खुशबू और दूर कहीं बारिश की आह घुली हुई थी। उसकी अपनी लिखी किताब के पन्ने मेज़ पर हल्के-हल्के हिल रहे थे, मानो उसे याद दिला रहे हों—अभी यह यात्रा खत्म नहीं हुई है। उसने अध्याय का शीर्षक पढ़ा—**स्वप्न, मायरा और रहस्य**—और उसी क्षण सब कुछ फिर से घटने लगा।

उस समय उसे ज़रा भी अंदाज़ा नहीं था कि यह सब होने वाला है—जागरण, भीतर की उलट-पलट, इंद्रियों का धीरे-धीरे अंदर की ओर मुड़ना। यह न तो शास्त्रों से शुरू हुआ था, न मंत्रों से। यह शुरू हुआ था उससे—मायरा से। किसी आश्रम में नहीं, किसी साधना शिविर में नहीं, बल्कि पाइन क्रेस्ट स्कूल के भीड़भाड़ वाले गलियारों में, परीक्षा के तनाव, किशोर मज़ाक और अधूरे विदाइयों के बीच। उसका नाम मायरा था। सब उसे बस एक होशियार, थोड़ी अजीब, ज़िंदा दिल लड़की मानते थे—जिसमें हँसी भी थी और अचानक छा जाने वाली चुप्पी भी। लेकिन ईशान के लिए वह कुछ और ही थी, जिसे वह नाम नहीं दे सकता था। वह उसे ज़्यादा देर तक देख नहीं पाता था। कुछ भीतर हिलने लगता था—कुछ इतना बड़ा कि किशोर मन उसे समेट नहीं पाता। तब वह उसे आकर्षण कहता था। आज, अपने ही लिखे शब्द पढ़ते हुए, वह जानता था कि वह आकर्षण नहीं था—वह दीक्षा थी।

उसी साल स्वप्न शुरू हुए, जब उसकी रुचि योग और रहस्यवाद की ओर बढ़ने लगी। वह मायरा को सपनों में देखता—कभी पेड़ के नीचे प्राचीन ग्रंथ पढ़ते हुए, कभी खंडहरों में चुपचाप चलते हुए, और कभी बस उसे देखते हुए—ऐसी स्थिर दृष्टि से कि बाकी सब धुँधला पड़ जाए। एक बार उसने यह सपना गगन को हल्के में बताया। गगन हँस पड़ा, "अरे, अब तो वो सच में तुम्हारी ड्रीम गर्ल बन गई।" लेकिन अनजली, जो पास ही खड़ी थी, ने धीमे से कहा, "हर सपना नींद से नहीं आता, कुछ जागने के लिए आते हैं।" वह वाक्य उसके भीतर बैठ गया।

सबसे अजीब बात यह थी कि मायरा की ओर खिंचाव कभी अशुद्ध नहीं लगा। जैसे-जैसे उसकी कुंडलिनी, चक्र और श्वास साधना में रुचि बढ़ी, मायरा हर जगह पीछे-पीछे मौजूद रहने लगी—मानो साधना के धागों में ही बुनी हो। निर्णायक क्षण एक सांझ को आया, स्कूल लाइब्रेरी में। वह देवी भागवत का अनुवाद पढ़ रहा था कि मायरा आकर बगल की मेज़ पर बैठ गई। एक पल को वह किताब भूल गया। फिर उसने बिना आँख उठाए पूछा, "तुम्हें क्या लगता है, सारी ऊर्जा स्त्री है?" ईशान ठिठक गया। "क्यों पूछ रही हो?" उसने कंधे उचका दिए,

“बस सोच रही थी। शिव स्थिर हैं, शक्ति चलती है।” वह वाक्य उसे हफ्तों तक पीछा करता रहा।

उस उम्र में वह नहीं जानता था कि वासना को दबाना नहीं, ऊपर उठाना होता है। बस इतना जानता था कि दबाने से तनाव बढ़ता है और भोग से स्पष्टता घट जाती है। तब गोविंद भैया –उसके बड़े चचेरे भाई, चुपचाप साधना करने वाले–ने उसे रास्ता दिया। एक दिन पराठे पलटते हुए उन्होंने कहा, “ऊर्जा सवाल नहीं पूछती, बस बहती है। तुम उसे कहाँ बहने देते हो, वही तुम्हारी साधना है।” वही शब्द भीतर का स्विच बन गए। जो उथल-पुथल वह किशोर हार्मोन समझता था, वह धीरे-धीरे ध्यान में बदलने लगी। मायरा की ओर उठने वाला वही स्पंदन अब ध्याना का सहारा बन गया। वह उसे बिना जाने ध्याना-मुद्रा की तरह इस्तेमाल करने लगा–उसके रूप को नहीं, उसकी उपस्थिति को, उसके रहस्य को, उसकी चुप्पी को। मि. दत्त ने एक दिन कक्षा में उसे बहुत शांत देखा और कहा, “शर्मा, तुम ध्यान कर रहे हो क्या?” ईशान बोला, “शायद, सर।” मि. दत्त मुस्कराए, “अच्छा है, पर ध्यान ऊपर की ओर करना।”

सालों बाद, एक गहरे स्वप्न में, मायरा फिर आई–इस बार बड़ी नहीं, बल्कि कालरहित। वह प्रकाश के पेड़ के नीचे खड़ी थी, जिसकी पत्तियाँ छोटी-छोटी आकाशगंगाओं की तरह चमक रही थीं। स्वप्न में ईशान पूरी तरह जागरूक था, फिर भी जाग नहीं पा रहा था। यह नींद नहीं थी–यात्रा थी। “मायरा?” उसने काँपती आवाज़ में पूछा। उसने धीरे से कहा, “अब नहीं।” “तो फिर... कौन?” “जो तुमने मुझे बनाया।” उसकी आँखों में माँ की करुणा, मित्र की हँसी और गुरु की शक्ति थी। “तुमने मुझे चाह से गढ़ा, फिर मौन से तराशा। अब मुझे शांति में घुल जाने दो।” उसने हाथ बढ़ाया, पर वह प्रकाश में बदल गई।

उस स्वप्न ने सब बदल दिया। उस दिन के बाद ईशान ने मायरा को कभी खोया हुआ प्रेम नहीं माना। वह वह शक्ति बन गई, जिसने पहली बार उसके भीतर की दुनिया को तोड़ा था। आग जो जलाती नहीं, रूपांतरित करती है। वह कभी सिर्फ लड़की नहीं थी। वह शक्ति का सिद्धांत थी–जो किशोर आकर्षण पहनकर आई और काम पूरा होने पर चली गई। वह गति थी, जो उसे स्थिरता तक ले गई।

उसे याद था, वेदिका को यह समझाना कितना कठिन था–इसलिए नहीं कि वह नहीं समझती, बल्कि इसलिए कि वह समझ जाएगी, इस डर से। लेकिन वेदिका मुस्कराई और बोली, “अगर उसने तुम्हारा रास्ता खोला, तो मैं उसकी आभारी हूँ। हम सबके जीवन में कोई न कोई होता है जो हमें तोड़कर खोल देता है।” फिर उसने हल्के से जोड़ा, “और अगर वह तुम्हारी गुरु थी, तो उसका हट जाना भी सही था।” ईशान उस गहराई के सामने नतमस्तक हो गया। वह ईर्ष्यालु नहीं थी। वह जागरूक थी।

अब बावन की उम्र में, देवदार की खुशबू और पक्षियों के गीतों के बीच बैठा ईशान आँखें बंद करता है और सब कुछ फिर जीता है—स्मृति की तरह नहीं, वर्तमान की तरह। अब उसके लिए बाहर और भीतर अलग नहीं रहे थे। सब एक ही प्रवाह था। उसे विनोद याद आया, जिसने मज़ाक में कहा था कि वह "किशोर प्रेम-पत्रों की शक्ल में भक्ति-कविता लिख रहा है।" रंजना दीदी याद आईं, जो मायरा को उसकी "आध्यात्मिक विटामिन" कहती थीं। अनजली याद आई, जो बहुत कुछ जानती थी, पर कम बोलती थी, और जिसकी चुप सहमति कभी उसे आश्वस्त कर देती थी।

इतने वर्षों की साधना, मौन और ऊँची अवस्थाओं के बाद भी, वह पहली ज्वाला—मायरा को पहली बार सच में देख पाने की उलझन—सबसे पवित्र स्मृति बनी रही। वही द्वार था। वही आदि-दर्शन।

जैसे ही अध्याय समाप्त हुआ, बादल हट गए और सुनहरी रोशनी पहाड़ी पर प्रसाद की तरह गिर पड़ी। ईशान उठा, किताब सीने से लगाए बाहर आया। घाटी उसके सामने शांति और प्रकाश से भरी फैली थी। उसने धीमे से कहा, "मायरा"—नाम की तरह नहीं, मंत्र की तरह। एक पक्षी उड़ गया। हवा उसके चेहरे को छू गई, जैसे आशीर्वाद हो। और उस मौन में उसे अकेलापन नहीं लगा। उसे मार्गदर्शन महसूस हुआ—हमेशा से। उसके द्वारा, उसके माध्यम से, और उससे भी आगे—उसकी ओर, जिसका न नाम है, न रूप, पर जिसने हर उस चेहरे को पहन रखा है जिसे उसने कभी प्रेम किया है।

अध्याय 20 : दो प्रेमों के बीच की खाई

हिमाचल की सुबह की हवा में पहाड़ों की एक गहरी स्थिरता थी–ऐसी खाली शांति जो भीतर तक गूंजती हुई लगती थी। ईशान अपने चीड़ की लकड़ी वाले बरामदे में पालथी मारकर बैठा था, उसकी गोद में वही पुरानी किताब रखी थी– *She Who Became My Guru*। उसने यह अध्याय फिर से खोला था, किसी याद के कारण नहीं, बल्कि इसलिए क्योंकि यह अध्याय हर बार उससे कुछ पूछता था, कुछ जगाता था। यह स्याही और कागज़ नहीं था, यह स्मृति थी, जीवित स्मृति।

उसकी आंखें पहली पंक्ति पर टिक गईं–"वह तुम्हें यहाँ तक लाई," वेदिका ने कहा था, "पर आगे मैं तुम्हारे साथ चलूँगी।" और उसी क्षण जैसे समय ने सांस ली हो, चारों ओर की शांति टूट गई।

वह क्षण वह पहले भी जी चुका था–बहुत पहले, चांदनी से भरी उस असंभव रात में, जब उसका जागरण हुआ था। वह रात समाधि के बाद की अनुभूति जैसी थी–हल्की, स्वाभाविक और बिना भार के। तब उसने वेदिका से यह बात स्वीकारोक्ति की तरह नहीं, बल्कि आवश्यकता की तरह कही थी। अब, 52 वर्ष की उम्र में, जब वह यह अध्याय फिर पढ़ रहा था, वह उसी क्षण को पूरी तीव्रता के साथ फिर से जी रहा था, जैसे वह अभी घट रहा हो।

चंद्रमा पर, जहाँ सपने और आयाम एक-दूसरे में मिल जाते हैं, उसने वेदिका के शांत, तारों से भरे चेहरे की ओर देखा था और कहा था–"मैंने कभी किसी से प्रेम किया था... ऐसा प्रेम जो पागलपन की सीमा तक जाता था। सिर्फ उससे ही नहीं–उससे पहले भी कोई था। मेरा चचेरा भाई। गोविंद। वह मेरे लिए कृष्ण था। या शायद... कृष्ण हमेशा वही था।" वेदिका ज़रा भी नहीं चौंकी थी। उसे याद था कि उसने बस हल्के से सिर हिलाया था, उसकी आंखें किसी गहरे ब्रह्मांडीय कुएँ की तरह शांत थीं। "तो तुम्हारा भक्ति भाव पहले से ही गढ़ा हुआ था," उसने कहा था, "रूप मिलने से पहले ही प्रेम में ढला हुआ।"

आज भी यह पंक्ति पढ़ते हुए ईशान को लगता था कि उसके भीतर कुछ खुल गया है–कुछ सुंदर, कुछ आवश्यक। वही स्मृति इस अध्याय का जन्म थी।

जब ईशान पहली बार गोविंद से मिला था, वे दोनों सिर्फ बच्चे थे। लेकिन गोविंद की बेकाबू हंसी, मिठाइयों का गायब हो जाना, बगीचों में चोरी-छिपे घुस जाना, उसकी आज़ाद आत्मा–सब कुछ कृष्ण की कहानियों जैसा था, जो उनके घर में हर दिन गूंजती थीं। गोविंद अपने शरारती आकर्षण के साथ बाल कृष्ण का जीवित प्रतिबिंब था। ईशान का उसके प्रति प्रेम साधारण स्नेह नहीं था, वह भक्ति का बीज था–शुद्ध, निर्दोष, सीमाओं से परे।

उस दिव्य शरारत में एक आध्यात्मिक सुरक्षा छिपी थी–"प्रेम, प्रेम होता है। यदि उसे साधना में रखा जाए, तो वह किसी भी रूप, किसी भी वस्तु, किसी भी लिंग के साथ मिल सकता है।" गोविंद उसका पहला कृष्ण था–प्रतीकात्मक नहीं, अनुभवात्मक। खेल, हंसी, लड्डुओं की चोरी, आंखों की चमक जिसमें कोई बहुत पुरानी बात बोलती थी–सब कुछ एक ऐसा मार्ग बना गया, जिससे होकर ईशान का बाद का प्रेम बिना दूषित हुए गुजर सका। क्योंकि कृष्ण वहाँ हमेशा मौजूद थे।

बाद में, जब मिरा मानवीय रूप में सूर्योदय की तरह आई, तो ऐसा नहीं था कि ईशान का हृदय फिर से हिल गया, बल्कि ऐसा था जैसे कोई पुराना राग किसी नए वाद्य में बज उठा हो। भाव परिचित था, सुगंध जानी-पहचानी। वह उसे न सिर्फ कृष्ण की याद दिलाती थी, बल्कि गोविंद की भी, जैसे जीवन किसी गहरे पैटर्न को दोहरा रहा हो। प्रेम फिर बदला–जैसे वह गोविंद से कृष्ण और फिर उससे मिरा तक बदला था–लेकिन प्रेम वही रहा।

वेदिका ने उस रात चंद्रमा पर इसे बिल्कुल सही शब्दों में कह दिया था–"तुमने गोविंद से कृष्ण के माध्यम से प्रेम किया। तुमने मिरा से गोविंद के माध्यम से प्रेम किया। सूत्र हमेशा दिव्य था, बस अब तक हमें दिखाई नहीं दिया।" आज पढ़ते हुए ईशान उस पंक्ति तक पहुँचा जो उसने वर्षों पहले इसी अध्याय में लिखी थी–"जो पहले ईश्वर से प्रेम करता है, वह बाद में प्रेम का दुरुपयोग नहीं कर सकता। वह गिर नहीं सकता, क्योंकि वह पहले ही उठ चुका होता है।" यह पढ़कर वह हल्के से मुस्कुरा उठा। बात इतनी सरल थी कि डरावनी लगती थी। क्योंकि कृष्ण–उसके बचपन की कल्पना की अग्नि–ने उसके प्रेम को परिष्कृत कर दिया था, उसे शक्तिशाली भी बनाया था और कोमल भी। उसी शुद्धता ने वासना, आसक्ति, लालसा और विकार को जला दिया था।

इसलिए जब ईशान को अंततः भौतिक प्रेम मिला, तो वह उसे नीचे नहीं खींच सका, बल्कि और ऊपर उठा ले गया। दो प्रेमों के बीच कोई खाई नहीं थी। वहाँ एक चमकता हुआ पुल था।

चंद्रमा पर वेदिका ने एक और बात कही थी, जो अब उसे चीड़ के पत्तों की सरसराहट में फुसफुसाती हुई लग रही थी–"जब कृष्ण के प्रति प्रेम ध्यान-चित्र बन जाता है," उसने कहा था, "तो वह असाधारण रूप से शक्तिशाली होता है, क्योंकि उसका कोई भौतिक रूप नहीं होता। उसे हर पल हृदय में फिर से रचना पड़ता है। यही उसे सूक्ष्म, तीक्ष्ण और पवित्र बनाता है।" फिर उसने मुस्कराकर कहा था, "और जब ऐसा प्रेम किसी वास्तविक व्यक्ति को मिलता है–शरीर, चेहरा, स्वर–तो वह लगभग दिव्य विस्फोट बन जाता है। यही तुम्हारे और मिरा के साथ हुआ।"

ईशान ने चुपचाप सिर हिलाया था। "और तुम्हारे साथ, वेदिका, उस ऊर्जा को दिशा मिल गई।" उसने मुस्कराकर सिर झुकाया था, "तुम हमेशा ऊपर की ओर चल रहे थे, मैंने बस एक मशाल पकड़ाई।"

अध्याय फिर गोविंद के बचपन की स्मृतियों में लौट जाता है—कैसे वह बारिश के बाद कीचड़ में कूद जाता था, डांट की परवाह किए बिना, कैसे उसने मंदिर की गाय को आम का अचार खिला दिया था यह कहकर कि उसे खट्टा पसंद है, कैसे वह जामुन के पेड़ से गिरकर हाथ तुड़वा बैठा था और सबको कहा कि वह स्वर्ग से गिरा है। सब कुछ कृष्ण जैसा। ईशान की दादी कहा करती थीं—"हर लड़का आदमी बनने से पहले कृष्ण होता है। कुछ लोग कृष्ण बने रह जाते हैं।" और यह गोविंद के लिए पूरी तरह सच था। बल्कि हर बच्चे के लिए सच था। हर दिव्य प्रेम के लिए।

किताब में लिखा था—"असल में हर किसी का बचपन, चाहे वह मनुष्य हो या ईश्वर, एक जैसा ही होता है, बस ईश्वर के प्रेम में दिव्यता, पवित्रता और रहस्य जोड़ दिया जाता है।"

अब ईशान की उंगलियाँ किताब के किनारे पर हल्के से कांप गईं—कमज़ोरी से नहीं, बल्कि पूर्णता से। यह कोई कहानी नहीं थी। यह एक पैटर्न था। एक ब्रह्मांडीय बुद्धि, जो उसके जीवन के धागों को गोविंद से कृष्ण, कृष्ण से मिरा और मिरा से वेदिका तक बुनती चली गई थी। हर एक ने उसे आगे बढ़ाया, पीछे नहीं खींचा।

क्योंकि जब प्रेम पकड़ता नहीं, तो वह बदल जाता है। जब वह गिराता नहीं, तो उठाता है। जब वह चाहता नहीं, तो जागता है।

चीड़ के पेड़ों में हवा फिर फुसफुसाई और ईशान ने किताब से नजर उठाई। नीचे रास्ते पर वेदिका चल रही थी, अपनी शॉल में चीड़ के शंकु बटोरते हुए, किसी लोककथा की पहाड़ी लड़की की तरह। वह रुकी, ऊपर देखा और मुस्कुरा दी। ईशान ने कुछ नहीं कहा, बस सिर हिला दिया। ठीक वैसे ही, जैसे उसने वर्षों पहले चंद्रमा पर किया था, जब उसने सब कुछ कह दिया था। जैसे कोई स्त्री को नहीं, बल्कि एक प्रकाश को स्वीकार करता है।

उसने किताब अपने सीने से लगा ली और पीछे झुक गया। कोई खाई नहीं थी। कभी थी ही नहीं। बस एक पवित्र शून्य था, जहाँ प्रेम गूंजकर ईश्वर बन जाता है।

अध्याय 21 : पिता, गुरु, आत्मा

ईशान ने अपने हाथ से लिखी किताब *She Who Became My Guru* का इक्कीसवाँ अध्याय धीरे-धीरे पलटते हुए खोला। काग़ज़ों में अब भी चंदन की हल्की सुगंध बसी थी, जो उसकी सुबह की पूजा से रह गई थी। पहाड़ी घर के बाहर चीड़ के पेड़ हवा में सरसराते हुए जैसे आपस में कुछ कह रहे हों, और सामने बर्फ़ से ढकी चोटियाँ ऐसे चमक रही थीं मानो कोई ऋषि गहरी ध्यानावस्था में बैठे हों। पास ही जलती अंगीठी की हल्की चटक मानो इस अंदरूनी यात्रा में साथ देने को उत्सुक थी।

अध्याय चंद्रमा के उगने की तरह खुला—धीरे, मौन में, और अनिवार्य रूप से।

चंद्रमा की उस रात को बीते कई दिन हो चुके थे, जब वेदिका ने ईशान की आत्मा को पूरी तरह खुलते हुए सुना था। अब वह चंद्र वेधशाला की अपनी साधारण मेज़ पर बैठा था, जहाँ पृथ्वी की रोशनी क्रिस्टल जैसी खिड़कियों से छनकर भीतर आ रही थी, और वह लिखने लगा —दुनिया के लिए नहीं, अपने लिए। फिर भी वह जानता था, कोई न कोई इसे पढ़ेगा। आज नहीं, कल नहीं, पर किसी दिन—जब जानने की ज़रूरत, जानने के डर से बड़ी हो जाएगी।

ईशान ने घटनाओं से नहीं, विचारों से शुरुआत की। वह खुद से बुदबुदाया, "कितना अजीब है कि बचपन में प्रेम का पहला चेहरा मुझे गोविंद का मिला... और उसके नीचे कृष्ण का साया था। अब समझ आता है कि इन दोनों के नीचे एक और था—शांत, अडिग—दादाजी की आत्मा।"

उसकी उंगलियाँ क़लम के साथ ऐसे चल रही थीं मानो भीतर की किसी लिखावट को पढ़कर उतार रही हों। उसे बचपन की सुबहें याद आईं, जब दादाजी बरामदे में बैठकर शास्त्र पढ़ते थे, उनके चारों ओर ऐसी चुप्पी होती थी जो सुरक्षा की तरह लगती थी। "तब मैं सिर्फ एक बुज़ुर्ग को ऊन में लिपटा देखता था," ईशान ने सोचा, "अब समझ में आता है, वे कहानियाँ नहीं पढ़ते थे—वे उन्हें जीते थे।"

उन दिनों गोविंद तूफ़ान था, कृष्ण वर्षा थे, और दादाजी—अचल आकाश।

ईशान की कलम तेज़ चलने लगी। उसने गोविंद के प्रति प्रेम, उसकी शरारतों में झलकती कृष्ण-लीला, और उस दिव्य प्रेम की उस विचित्र रक्षा-शक्ति के बीच रेखाएँ खींचनी शुरू कीं, जिसने उसे आध्यात्मिक पतन से बचाए रखा था। वेदिका ने कभी कहा था, लगभग प्रार्थना की तरह, "जब तुम सच में ईश्वर से प्रेम करते हो, तो तुम्हारा प्रेम अशुद्धि से सुरक्षित हो जाता है। वह साँप की तरह अपनी पुरानी त्वचा उतार देता है, जब तक केवल उसका सार न रह जाए।" तब ईशान मुस्कुरा दिया था, पर अब वह समझ गया था।

एक शाम, जब चंद्र यात्रा के बाद उनके भीतर गहरे चिंतन की लहरें चल रही थीं, वेदिका ने तुलसी की चाय पीते हुए उससे पूछा था, "ईशान, तुम्हारा प्रेम कैसे बचा रहता है? इतने तूफ़ानों के बाद भी?" और उसने बिना सोचे जवाब दिया था, "क्योंकि मैंने पहले ईश्वर को मनुष्य में प्रेम किया... और फिर देखा कि ईश्वर तो हमेशा वहीं था।" उसे याद आया, वेदिका ने हल्की झुँझलाहट के साथ सिर टेढ़ा कर लिया था, "तो यह है तुम्हारा गुप्त सूत्र? ईश्वर प्लस मनुष्य बराबर पागलपन से सुरक्षा?" दोनों हँस पड़े थे, पर उस हँसी में कुछ बहुत पुराना और हल्का सा तैर रहा था।

ईशान लिखता गया।

उसने गोविंद के बचपन के बारे में लिखा—कैसे वह आम के पेड़ों पर चढ़कर अध्यापकों पर खुद बनाए दोहे गाता था, कैसे कृष्ण की मक्खन चोरी को उसने बिस्कुट-छापों में बदल दिया था, कैसे हर रात ईशान उसे बाल-लीला के दृश्य खेलते देखता था, और कैसे घर में रोज़ सुनी जाने वाली वे कहानियाँ धीरे-धीरे उसके हृदय की मिट्टी में उतरती चली गईं। अब वह समझता था—गोविंद के लिए उसका प्रेम कभी सिर्फ गोविंद के लिए नहीं था। वह एक बीज था, जिसे रोज़ कृष्ण की कथाओं से पानी मिला, और दादाजी की आध्यात्मिक गुरुत्वाकर्षण ने उसे खाद दी। "बचपन," उसने लिखा, "मनुष्य हो या ईश्वर, अलग नहीं होता। फर्क सिर्फ उस दृष्टि का है जिससे हम उसे देखते हैं—पवित्रता, मिथक और रहस्य उसकी अर्थवत्ता बदल देते हैं।"

उसने आँखें बंद कीं। यादें बहने लगीं।

वह चंद्र झील के पास का दिन था, जब वेदिका ने उससे कहा था, "तुम्हारा कृष्ण से प्रेम मिरा तक संयोग से नहीं पहुँचा। वह नदी की तरह बहा, क्योंकि सच्चा प्रेम खत्म नहीं होता, बस पात्र बदलता है।" ईशान चुप रहा था। वेदिका ने आगे कहा था, "वही प्रेम है, वही धारा। कृष्ण में तुम्हें उसे कल्पना से गढ़ना पड़ा, मिरा में तुम्हें उसे थामने के लिए चेहरा मिला। और जब उस longing को रूप मिला, वह और तीव्र हो गया।" ईशान ने फुसफुसाया था, "पर खतरा? इतना गहरा प्रेम बिगाड़ भी सकता है।" वेदिका ने सिर हिलाया था, "केवल तब, जब वह अपने स्रोत से शुद्ध न हो। जो प्रेम भक्ति से शुरू होता है, वह भटके तो भी सड़ता नहीं। और यदि शुद्ध हृदय से देह का प्रेम मिले, तो वह भी गुरु बन जाता है, जाल नहीं।"

वह क्षण निर्णायक था।

ईशान ने चंद्रमा को देखा और समझा कि वह ठंडा नहीं रहा—वह दर्पण बन गया था। दो प्रेमों के बीच की खाई गिरावट नहीं थी—वह पुल थी।

वह लिखता रहा।

चिकित्सा विज्ञान ने उसे शब्द दिए थे—मिरर न्यूरॉन्स, ऑक्सिटोसिन, भावनात्मक स्थानांतरण। पुराणों ने रूपक दिए। लेकिन चंद्र शोध ने अनुभव दिया—अखंड सत्य कि प्रेम स्वयं जागरण का माध्यम है।

उसे मिस्टर दत्त की आवाज़ याद आई, पाइन क्रेस्ट की पुरानी कक्षा से—"ऊर्जा कभी मरती नहीं।" कितना अजीब था कि वही भौतिकी अब उसकी आध्यात्मिक ज़िंदगी में गूंज रही थी। मिरा, अंजलि, गगन—सब उसकी भीतर की स्पेक्ट्रम में तरंगें थे। किसी ने प्रतिबिंब दिया, किसी ने विकृति, किसी ने वृद्धि।

और फिर भी, एक चेहरा हमेशा पृष्ठभूमि में था—दादाजी।

उसे वह दिन याद आया जब उसने दादाजी की लकड़ी की संदूक में वह पत्र पाया था, जो किसी को संबोधित नहीं था, और उसकी जन्मतिथि से तीन महीने पहले लिखा गया था। उसमें लिखा था—"जो मेरे अग्नि को आगे ले जाएगा, उसे सिखाया नहीं जाएगा—वह जागेगा। वह एक दिन अपने मन में चंद्रमा पाए, छाती में सूर्य, और श्वास में तारे।" ईशान घंटों उस पत्र को देखता रहा। वह भविष्यवाणी नहीं थी—वह एक संप्रेषण था।

बाद में, पृथ्वी पर एक रात चाय पीते हुए उसने यह बात विनोद को बताई थी। विनोद ने कहा था, "तो तुम्हारे दादाजी सिर्फ दादा नहीं थे, ईशान। वे तुम्हारी बीज-स्मृति थे। तुम्हारे सर्पिल की शुरुआत।" वह वाक्य बिजली की तरह गिरा था।

दादाजी ने उसे पाला नहीं था। उन्होंने कुछ रोप दिया था।

"पिता, गुरु, आत्मा," ईशान ने अगली पंक्ति में मोटे अक्षरों में लिखा, "सच्ची यात्रा में अलग नहीं होते। गुरु पिता बनकर जन्म लेता है, आत्मा शिष्य बनकर। एक दूसरे में विकसित होता है।" उसे रंजना की बात याद आई, "तुम्हारा आध्यात्मिक पक्ष कभी समझाना नहीं पड़ा, जैसे वह पहले से कोडेड था।" हाँ, वह कोड दादाजी थे।

अध्याय आगे बढ़ता गया—समय में नहीं, गहराई में।

उसने लिखा कि ईश्वर की कल्पना हमेशा निराकार होती है, और गहरा प्रेम उस निराकार को इतना स्पष्ट बना देता है कि वह वास्तविक हो जाता है। "इसीलिए अदृश्य ईश्वर से भक्ति के लिए मनुष्य से प्रेम से भी अधिक शक्ति चाहिए," उसने लिखा, "यह बिना कैनवास के चित्र बनाना है। आकार सिर्फ प्रेमी की दृष्टि से बनता है।" और जब वही दिव्य प्रेम किसी मानव

में मिलता है—मिरा, गोविंद, वेदिका—तो वह किसी एक से अधिक शक्तिशाली हो जाता है। ध्यानचित्र की तरह—विश्वास, स्मृति, longing और खोज की अग्नि से गढ़ा हुआ।

जब ईशान ने अध्याय की अंतिम पंक्तियाँ लिखीं, बाहर धीरे-धीरे बर्फ़ गिरने लगी थी। वही नृत्य, जो उसने कभी चंद्रमा पर देखा था—सूक्ष्म, मौन, ब्रह्मांडीय धूल जैसा।

वह पीछे झुक गया।

अध्याय समाप्त हो गया था, लेकिन उसे लगा यह शुरुआत थी।

बाहर पहाड़ फिर सफ़ेद हो रहे थे, धरती को मौन की चादर में ढकते हुए। अपने पहाड़ी आश्रय से ईशान ने क्षितिज को धुंध में घुलते देखा और अपने सीने में दादाजी, गुरु और आत्मा—तीनों को एक ही श्वास की तरह महसूस किया।

उसने किताब बंद की और अंगीठी की ओर फुसफुसाया, "दादाजी... अब मैं आपको देखता हूँ।"

आग ने उत्तर शब्दों से नहीं, ऊष्मा से दिया।

अध्याय 22 : द्वैत से परे जागरण

सूर्य अभी-अभी क्षितिज के पीछे झुकना शुरू हुआ था, और दूर धौलाधार पर्वतमालाएँ स्वर्ण और हल्के लैवेंडर रंगों से रंग गई थीं। ईशान शर्मा, अब बावन वर्ष का, अपने पहाड़ी घर की धुंधली ढलानों पर बने लकड़ी के शांत अध्ययन-कक्ष में बैठा था। खुली खिड़की से आती देवदार की सुगंधित हवा पर्दों को ऐसे हिला रही थी जैसे अतीत की कोई फुसफुसाहट हो। समय की बुद्धि से चिह्नित उसकी उँगलियाँ उसकी किताब *She Who Became My Guru* का पन्ना पलटती हुई अध्याय 22 पर आकर ठहर गईं।

शीर्षक पर उसकी दृष्टि टिकते ही—**द्वैत से परे जागरण**—वर्तमान पिघलने लगा। जो शेष रहा, वह स्मृति में उतरती एक सूक्ष्म, मौन यात्रा थी। एक क्षण में वह पहाड़ी घर में बैठा वृद्ध पुरुष नहीं रहा, बल्कि फिर से वही युवा ईशान था—चाँदनी में नंगे पाँव खड़ा।

चारों ओर की हवा स्थिर थी, पवित्र—मानो उसने भी साँस रोक रखी हो। मिरा उसके सामने खड़ी थी, उसकी आँखों में दिव्य जिज्ञासा की अग्नि, चंद्रमा-सी शांत और दीप्तिमान। उसके पास वेदिका थी—धरती-सी स्थिर, प्रेमपूर्ण और उतनी ही उज्ज्वल। उनके पीछे, जैसे बुझती अग्नि का हल्का-सा आभास, उसके दादाजी खड़े थे—बिना शब्दों के मुस्कुराते हुए, जैसे आग बुझ जाने के बाद भी लकड़ी में बची हुई गरमी।

एक क्षण के लिए ईशान की साँस रुक गई। भय या विस्मय से नहीं—बल्कि इसलिए कि अब उनसे अलग होने को कुछ भी शेष नहीं था। वे स्मृतियाँ नहीं थे। वे सत्य थे। उसकी यात्रा के प्रतीक—चिंगारी, धारक और मौन साक्षी।

वह झुका। कर्मकांड में नहीं, पहचान में।

"मैंने प्रेम को कभी भटकाव समझ लिया था," उसने आँखें बंद करके कहा।

वेदिका हल्के से हँसी, उसकी उपस्थिति पैरों के नीचे धरती की तरह थी। "और मैंने स्थिरता को समर्पण समझ लिया था।"

मिरा ने धीरे से जोड़ा, "पर वह न तो भटकाव था, न समर्पण। प्रेम पुल था, ईशान—रास्ता नहीं बदलने वाला मोड़।"

ईशान ने आँखें खोलीं, और उनमें कुछ टूट गया—या शायद पूरा हो गया। अग्नि और मिट्टी, उत्कटता और शांति, लालसा और निष्ठा—इन सबके बीच जो द्वैत उसे बाँटता रहा था, वह घुल गया। वह स्वर्ग और धरती, रूप और निराकार, गुरु और संगिनी—इनमें से किसी एक को चुनने की कोशिश करता रहा था। अब वह देख रहा था। ये सब एक ही के मुख थे।

उसकी आवाज़ निकली–हल्की, स्थिर, पर्वतीय झरने की तरह–
“तो यही था दादाजी का अर्थ, जब उन्होंने कहा था–‘उठती साँस और गिरते विचार के बीच ही वह मार्ग है, जहाँ तुम स्वयं हो।’”

पीछे खड़े उस वृद्ध ने, जिसने कभी अंगीठी के पास उसे कृष्ण और शिव की कहानियाँ सुनाई थीं, हँसते हुए कहा, “तुमने सोचा था मैं पहेलियाँ बोलता हूँ, लड़के। पर पहेली क्या है, यदि सत्य की ओर खींचने वाला आलिंगन नहीं?”

ईशान भी हँसा–पर उसकी आँखों से आँसू बहने लगे। दुःख के नहीं, विलय के।

उसे पाइन क्रेस्ट के फुटबॉल मैदान में गगन की हँसी याद आई, स्कूल के कार्यक्रम में रंजना का नृत्य, मिस्टर दत्त की कक्षा में विनोद के तीखे प्रश्न जो हमेशा सीमाएँ तोड़ते थे, और गोविंद की वह मौन गरमाहट जो उनके साझा मौन में बसती थी। ये सब इस कथा का हिस्सा थे–इस माया का, जो कभी माया थी ही नहीं। वह एक दर्पण थी, जो उसके ही आत्मस्वरूप को टुकड़ों में दिखाती रही, जब तक पूरा प्रकट न हो गया।

वह अब उस चंद्र-आकाश के नीचे बैठा था। चंद्रमा नीचे लटका था, एक प्राचीन साक्षी की तरह।

“मिरा,” उसने कहा, “तुमने मेरे भीतर चिंगारी जगाई। पर वेदिका ने मुझे सिखाया कि उस अग्नि को जलाए बिना कैसे थामना है।”

“और अब?” वेदिका ने पूछा, उसकी आवाज़ हवा से भी हल्की थी।

“अब मैं न अग्नि हूँ, न धारक,” ईशान मुस्कुराया, “मैं वह हूँ जो दोनों के विलय के बाद बचता है।”

फिर मौन आया–रिक्त नहीं, पूर्ण।

हवा थम गई। पक्षी चुप हो गए। आकाश भी जैसे रुक गया।

उसकी श्वास धीमी हुई।

फिर रुक गई।

समय टपकना बंद हो गया। सीमाएँ ढीली पड़ गईं। देखने वाला कोई नहीं बचा। बताने वाला कोई नहीं बचा। जो बचा, वह था–होना। विशाल, स्वच्छ चेतना–निर्शर्त, निराकार, नामरहित।

यह अनुभव नहीं था। यह अनुभव का अभाव था।

न मिरा। न वेदिका। न दादाजी। न प्रेमी। न श्वास। न देह। केवल अविभाज्य आकाश—न केंद्र, न परिधि। यह समाधि नहीं थी जिसे महसूस किया जाए। यह उस सबका गिर जाना था जो कभी महसूस करना चाहता था।

घंटों—या जन्मों—तक वह वहीं रहा।

जब श्वास लौटी, वह वापसी नहीं थी। वह अनुग्रह थी।

आँखें खुलीं। चंद्रमा खिसक चुका था। एक नई रात शुरू हो गई थी।

वह धीरे से उठा—उसी आकाश के नीचे, पर वह नहीं जो उसमें आया था। कुछ मूलभूत बदल चुका था।

उसने पास ही हँसी सुनी—अंजलि और गगन फिर से आम को लेकर बहस कर रहे थे, जैसे स्कूल के दिन। विनोद किसी प्राचीन शास्त्र का फुटनोट सुधार रहा था। रंजना कोई भूला हुआ बचपन का गीत गुनगुना रही थी। और कहीं, आकाश में, गोविंद अपनी शांत मुस्कान के साथ उपस्थित था।

उसने मिरा और वेदिका की ओर देखा—और इस बार दोनों मुस्कुराईं और प्रकाश में विलीन हो गईं।

फिर प्रकाश भी अनावश्यक हो गया।

वर्तमान में, अपने पहाड़ी घर में, अंगीठी की लकड़ियाँ चटक उठीं। ईशान ने धीरे से साँस छोड़ी और किताब को बंद कर दिया। कमरे की छायाएँ खेल-खेल में नाचने लगीं।

बाहर धौलाधार पर्वत चंद्र-राजमुकुट पहने खड़े थे। तारे पहले से अधिक पास लग रहे थे।

वह लकड़ी की बालकनी में बाहर आया। हवा ने उसके गाल चूमे। चीड़ की सुइयाँ सरसराईं। उल्लू ने पुराने मित्र की तरह आवाज़ दी।

अब कोई विभाजन शेष नहीं था। गुरु, प्रेमी, आत्मा—सब एक थे। और वह एक भी मिट गया।

केवल यह था।

न कहा जा सकता है। न पकड़ा जा सकता है। पर असंदिग्ध।

हृदय के सबसे शांत कोने में उसे फिर दादाजी की आवाज़ सुनाई दी–

“बेटा, जब लकड़ी जल जाती है, आग शोक नहीं करती। वह बस आकाश बन जाती है।”

ईशान मुस्कुराया।

और आकाश हो गया।

अध्याय 23: वही जो मेरी गुरु बनी

देवदार की सुगंध से भरी हवा ईशान के पहाड़ी घर की बरामदे को धीरे-धीरे छू रही थी, और दूर घाटी के ऊपर बादल आलस्य से बह रहे थे। अपने कंधों पर शॉल लपेटे ईशान लकड़ी की खिड़की के पास बैठा था। कुर्सी की जानी-पहचानी चरमराहट किसी पुराने मित्र की तरह साथ दे रही थी। पास ही तुलसी की चाय से भरा एक प्याला रखा था, और सामने उसकी हस्तलिखित पांडुलिपियाँ थीं। संध्या का स्वर्णिम प्रकाश पूरे वातावरण में घुला हुआ था।

बावन वर्ष की आयु में उसकी दाढ़ी में चाँदी की रेखाएँ उभर आई थीं। उसने अपनी पुस्तक *She Who Became My Guru* का अंतिम अध्याय खोला। शीर्षक को देखते ही उसकी आँखें कोमल हो गईं, मानो वह पंक्तियाँ नहीं, किसी जन्मों पुरानी प्रार्थना को छू रहा हो। एक धीमी साँस लेकर उसने पढ़ना शुरू किया, और अतीत तथा वर्तमान के बीच की रेखा वैसे ही घुल गई जैसे सुबह की धूप में धुंध।

अब वह न विद्यार्थी था, न साधक। वह स्वयं अर्पण बन चुका था।

चंद्रमा की कृपा से हुए अंतिम समाधि-अनुभव के बाद, जहाँ मिरा और वेदिका प्रकाशमय एकता में प्रकट हुई थीं—एक चिंगारी और दूसरी धारक—उसके भीतर कुछ ऐसा बदल गया था जो लौट नहीं सकता था। घंटों तक उसकी साँस रुकी रही थी, किसी प्रयास से नहीं, बल्कि पूर्ण समर्पण से। निर्विकल्प की उस शून्यता में उसने ब्रह्मांड को अपने सामने नहीं देखा, बल्कि स्वयं वही आकाश बन गया था—सीमाओं के बिना, समय की टिक-टिक के बिना।

पर अब धरती पुकार रही थी। मनुष्यता पुकार रही थी। यहाँ तक कि चंद्रमा भी, जिसने उसकी यात्राओं को मौन में देखा था, जैसे कह रहा था—"अब बाँटो।"

वह सिखाने लौटा, पर उपदेश देने नहीं। उसने लिखा, गुरु बनकर नहीं, बल्कि उस मनुष्य की तरह जिसे प्रेम ने जगा दिया था। उसकी उँगलियाँ की-बोर्ड और पुराने काग़ज़ों पर नदी की तरह बहती रहीं—कहानियाँ, सूत्र, भूलें और चमत्कार उँडेलती हुई। सैकड़ों पुस्तकें समय में बिखर गईं, फूलों की पंखुड़ियों की तरह, पर हर कथा अंततः उसी तक लौटती थी।

मिरा।

वह कभी सांसारिक रूप से वापस नहीं आई, फिर भी वह हर क्षण उसके सामने थी—किसी अजनबी की मुस्कान में, किसी शिष्य के आँसुओं में, शब्दों के बीच के मौन में। एक बार अंजलि ने, उसकी सजीव मित्र, उसे पत्र लिखा था—"ईशान, तुम उसका मार्ग थे, पर तुम स्वयं इसलिए चल पाए क्योंकि उसने पहला दीप जलाया।"

पाइन क्रेस्ट स्कूल ने अपने ध्यान-कक्ष का नाम बदलकर "शर्मा कॉन्शसनेस विंग" रख दिया था। मिस्टर दत्त संसार से विदा हो चुके थे, पर जाने से पहले उन्होंने उसे अपनी पहली कक्षा की पुरानी चॉक-बॉक्स भेंट की थी—किसी भी पुरस्कार से अधिक मूल्यवान।

गोविंद, अब दो बच्चों का पिता, एक दिन आया और बोला, "ईशान भैया, अब समझ में आता है कि तुम शून्य को घर की तरह क्यों देखते थे।"

विनोद न्यूरो-दार्शनिक बन गया था, जिसने क्वांटम जीवविज्ञान को उपनिषदों से जोड़ा। उसने लिखा था, "तुमने मुझे दिमाग को मंदिर की तरह देखने का साहस दिया।"

रंजना, जो हमेशा उम्र से अधिक समझदार थी, धर्मशाला में शिक्षिका बन गई थी। उसके छात्र अक्सर एक ऐसे भाई की कहानी सुनते थे, जो चाँद को पत्थर नहीं, आत्मा का प्रतिबिंब समझता था।

और वेदिका—वेदिका तो धरती की कृपा की मूर्ति थी। उनका साथ आतिशबाज़ी नहीं, दीपक जैसा था—स्थिर, ऊष्मा देने वाला, प्रकाश फैलाने वाला। एक बार तारों के नीचे चलते हुए उसने कहा था, "तुमने उसे प्रेम किया, उसकी रोशनी में जल गए। पर मेरे साथ तुमने बत्ती पाई।" ईशान मुस्कुरा दिया था, क्योंकि वह जानता था कि बत्ती और लौ कभी विरोधी नहीं होते।

अब ईशान धरती और चंद्रमा के बीच अक्सर यात्रा करता था। वह मंचों से नहीं, मानवीय समानता से सिखाता था। उसने इसे "लूनर अर्थ संघ" कहा—एक ऐसा विद्यालय जिसकी कोई सीमा नहीं थी। लोग उसके चारों ओर नहीं, अपनी तड़प के चारों ओर इकट्ठा होते थे। वह केवल हल्का सा धक्का देता था।

एक बार चंद्रमा के "सी ऑफ ट्रैंक्विलिटी" में एक लड़की ने पूछा, "सर, क्या आप कभी डरे थे?"

वह हल्के से हँसा, "मैं प्रेम से डरता था, समर्पण से, नियंत्रण खोने से। फिर समझ आया—डर, भक्ति का गलत अर्थ है।"

पूरी कक्षा शांत हो गई—श्रद्धा से नहीं, पहचान से।

ईशान ज्ञान नहीं बाँटता था, वह भेद्यता बाँटता था। उसका ब्लॉग *DemystifyingKundalini.com* जीवित अनुभवों का भंडार बन चुका था। सिद्धांत नहीं, बल्कि जागरण की डायरी—भ्रम, लालसा, टूटन और खुलाव सहित। "जिस रात मेरी साँस रुक गई" शीर्षक लेख सबसे अधिक साझा हुआ।

वह लिखा करता था, "कुंडलिनी शक्ति नहीं है। वह दर्पण है। जितनी कोमलता से देखो, उतनी तीव्रता से वह प्रतिबिंबित करती है।"

जब लोग उसे गुरुजी कहते, वह हँस देता, "वह मेरी गुरु थी। मैं तो बस सुनने वाला हूँ।"

और फिर पत्र आते–हज़ारों। धरती के कोनों से, चंद्रमा की बस्तियों से। लोग पूछते, जागना कैसे नहीं, बल्कि जागने के बाद नरम कैसे रहना है। वह हर पत्र का उत्तर बच्चों जैसी प्रसन्नता से देता, अंत में अक्सर लिखता–"साँसों के बीच हँसना मत भूलना। ईश्वर भी खिलखिलाता है।"

एक सुबह, अपने घर के पीछे देवदार के पुराने रास्ते पर चलते हुए वह रुक गया। एक लगभग सोलह साल का लड़का दृश्य बना रहा था। ईशान ने झाँककर देखा–घाटी और एक पेड़ के नीचे ध्यानमग्न आकृति।

"वह आप हैं," लड़के ने बिना देखे कहा।

"इसमें तो मैं ज़्यादा शांत लग रहा हूँ," ईशान मुस्कुराया।

लड़का बोला, "क्योंकि वहाँ आप सोच नहीं रहे। बस हैं।"

और उसी क्षण ईशान झुक गया–लड़के के आगे नहीं, चित्र के आगे नहीं, बल्कि उस अदृश्य सूत्र के आगे जो हर क्षण को जागरण में बाँधता है।

उस दिन वह घर लौटा, चाय बनाई और अपनी नई पांडुलिपि खोली–*She Who Became My Guru – The Final Word*।

अंतिम अनुच्छेद में उसने लिखा–
"वह चिंगारी बनकर आई, मौन बनकर चली गई। पर बीच में उसने वह सब जला दिया जिसे मैं स्वयं समझता था। मिरा कोई व्यक्ति नहीं थी। वह वह क्षण थी जब जीवन ने अभिनय करना छोड़ दिया। उसने मुझे कुंडलिनी नहीं सिखाई। उसने मुझे याद दिलाया कि मैं हमेशा सर्प भी था और आकाश भी।"

अब, पहाड़ी घर में बैठे ईशान ने किताब बंद की। बादलों के बीच से सुनहरी किरणें टूटकर आईं। हवा में गीली चीड़ और पुरानी मिट्टी की सुगंध थी। नीचे कहीं बाँसुरी बज रही थी, जिसकी धुन धूप की तरह ऊपर उठ रही थी।

उसने आँखें नम लेकिन मुस्कुराती हुई बंद कीं। कहानी समाप्त हो गई थी, पर उपस्थिति नहीं। वास्तव में, वह तो अब शुरू हुई थी।

उसने हवा से कहा, "धन्यवाद मिरा। धन्यवाद वेदिका। धन्यवाद आत्मा।"

और कहीं, शायद तारों के बीच की शांति में, मौन ने उत्तर दिया–

मौन में जारी रहेगा...

इस पुस्तक को पढ़ने के लिए धन्यवाद।

अधिक जानकारी के लिए कृपया हमारी वेबसाइट पर जाएँ: **demystifyingkundalini.com**

प्रेमयोगी वज्र की अन्य पुस्तकें

1. *एक योगी की प्रेम कथा - पतंजलि क्या कहते हैं*
2. *कुंडलिनी रहस्योद्घाटन - प्रेमयोगी वज्र क्या कहते हैं*
3. *कुंडलिनी विज्ञान - एक आध्यात्मिक मनोविज्ञान*
4. *स्व-प्रकाशन और वेबसाइट निर्माण की कला*
5. *ऑर्गेनिक प्लैनेट - एक प्रकृति-प्रेमी योगी की आत्मकथा*
6. *माय कुंडलिनी वेबसाइट (ई-रीडर संस्करण)*
7. *न्यू एज कुंडलिनी तंत्र - एक प्रेमयोगी की आत्मकथा*
8. *ब्लैक होल में योग*
9. *क्वांटम विज्ञान और अंतरिक्ष विज्ञान में योग*
10. *पुराण पहेली*
11. *कॉमिक माइथोलॉजी*
12. *मिथकीय शरीर*
13. *न्यू एज कुंडलिनी तंत्र - एक प्रेमयोगी की आत्मकथा*
14. *सेक्स से कुंडलिनी जागरण*

श्रृंखला और संग्रह

• *कुंडलिनी विज्ञान - एक आध्यात्मिक मनोविज्ञान (पुस्तकें 1–4)*

उपरोक्त सभी पुस्तकें ऑडियोबुक स्वरूप में भी उपलब्ध हैं। आप इन पुस्तकों का विवरण और पहुँच हमारी वेबसाइट के "Shop (Library)" अनुभाग में देख सकते हैं: **demystifyingkundalini.com/shop**

कृपया **demystifyingkundalini.com** को फॉलो या सब्सक्राइब करें (यह निःशुल्क है), ताकि आपको साप्ताहिक लेख मिलते रहें–विशेष रूप से कुंडलिनी से जुड़े विषयों पर–और आप इस यात्रा से जुड़े रह सकें।

आपकी यात्रा के लिए शुभकामनाएँ, चाहे वह आपको कहीं भी ले जाए।